सांस्कृतिक प्रलेखन

# हुरूका वाद्य यन्त्र

# हुडुका

मध्योत्तरी

अभिलेखीकरण एवं प्रकाशन

**उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र**

सांस्कृतिक प्रलेखन

# हुड़ुका

(हुरूका) वाद्य यन्त्र

जनजातीय शोध एवं विकास संस्थान
आदिवासी पुस्तक अध्ययन केन्द्र
क्रमांक...... दिनांक......

लेखक

**बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'**

अभिलेखीकरण एवं प्रकाशन

**उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र**

14, सी.एस.पी. सिंह मार्ग, इलाहाबाद

सांस्कृतिक प्रलेखन

**हुड़ुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र**

प्रकाशन वर्ष : 2015

प्रथम संस्करण : 2000 प्रतियां

प्रकाशक : *उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र*
14, सी.एस.पी. सिंह मार्ग, इलाहाबाद
फोन : 0532-2423698, 2423775
फैक्स : 0532-2423720

डिजाइन : **उषा ढल**
प्रकाशन सह-प्रलेखन अधिकारी
उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र

मुद्रण : **दुर्गा कम्प्यूट्रॉनिक्स**
6बी/4बी/9ए, बेली रोड
नया कटरा, इलाहाबाद

# आमुख

किसी भी लोक एवं उसके सांस्कृतिक स्वरूप की पहचान उसके साहित्य एवं पारम्परिक वाद्यों से ही होती है। लोक की सामाजिक एवं सांस्कृतिक बुनियाद की जड़ों को सिंचित कर उसके सुदृढ़ आधार प्रदान करने में लोक वाद्यों की भूमिका का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। अतः लोक साहित्य के साथ-साथ उसकी गीत को लयात्मक रूप देने वाले वाद्ययंत्रों का संरक्षण भी हमारा पुनीत कर्त्तव्य है। हुरूका उत्तराखण्ड एवं उत्तर प्रदेश का एक असाधारण लोक वाद्ययंत्र है जो सबको एकता के सूत्र में अटूट बन्धन के रूप में बाँधे हुए है। समाज से लोक वाद्यों का विलुप्त होना एक चिन्तनीय विषय है। उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद द्वारा सामाजिक समरसता एवं जनहित हेतु लोक साहित्य, लोकनृत्य-गीतों, लोकगाथाओं, लोक कथाओं, लोकोक्तियों तथा लोक नाटकों के साथ लोक वाद्ययंत्रों को संरक्षित करने का कार्य किया जाता है तथा भविष्य में भी केन्द्र इस दिशा में कार्य करने हेतु कृत संकल्पित है।

उत्तरांखण्ड व उत्तर प्रदेश के हुडुका (हुरूका) लोक वाद्ययंत्र पर अभिलेखीकरण का कार्य अमूल्य एवं विलुप्त होती हुई लोक वाद्ययंत्रों को सहेजने के क्षेत्र में एक अनूठा प्रयास है। मोनोग्राफ में स्थापित विभिन्न स्थानों पर विभिन्न मुद्राओं के वास्तविक फोटोग्राफ इस भ्रमित होते समाज को चिन्तन करने पर मजबूर करेंगे। यह मोनोग्राफ समाज सुधार की भूमिका के रूप में एक अमिट छाप छोड़ेगा, ऐसा मेरा अटूट विश्वास है। हम यह भी आशा एवं विश्वास करते हैं कि पठनोपरान्त पाठकों की प्रशंसा एवं यथास्थान यदि कोई त्रुटि हो तो उसका हम तहे दिल से स्वागत करेंगे तथा आपके सुझाव पर गम्भीरता से विचार भी करेंगे।

**गौरव कृष्ण बंसल**
आई.आर.टी.एस.
निदेशक
उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

# भूमिका

लोक वाद्ययन्त्रों में हुडुका (हुरुका वाद्ययन्त्र) अग्रगण्य है। इसे 'गोंड़ऊनाच' या 'गोंड़नचवा' के नाम से भी जाना जाता है। यह एक मर्यादा से परिपूर्ण धार्मिक आस्था एवं समाज सेवा का वाद्ययन्त्र है। सामाजिक विखण्डन को रोकने एवं समतामूलक समाज की स्थापना में यह धुरी का काम करता है। हालांकि वर्तमान काल में इसमें विलुप्ती का संक्रामक रोग लग चुका है परन्तु, जो और जहाँ उपलब्ध है, यह ऐतिहासिक दीवार बनकर खड़ा है। उत्तर प्रदेश/उत्तरांचल के सामाजिक एवं नीतिगत ढाँचे को यह नई ऊर्जा देकर मानवता निर्माण में रामबाण की भूमिका अदा कर रहा है। जिसे हीन भावना से देखा जाता था, वही आज विकसित होने का मिसाल हाजिर करने के प्रयोगार्थ हो गया है।

उत्तर प्रदेश/उत्तरांचल का हुडुका (हुरुका) वाद्ययन्त्र एक अति दुरूह विषय है। न तो इसका वास्तविक इतिहास ढूँढने पर उपलब्ध हो रहा है, और न इस विधा में महारत हासिल कोई व्यक्ति मौखिक वर्णन ही बयां कर रहे है। देश के वृहद से वृहत्तम् पुस्तकालयों में छानबीन करने पर भी 'खोदा पहाड़ निकली चूहिया' वाली लोकोक्ति ही हाथ लगी। अथक प्रयास करके, सुदूर तक अन्वेषण करके जो भी उपलब्धियाँ हुई हैं उन्हे ही कागज पर उतारा हूँ। वैसे यह कार्य मैं अपने संज्ञान में सत्य से सत्य ही किया हूँ फिर भी वास्तविकता को लेकर स्थिर नहीं हो पा रहा हूँ। उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र इलाहाबाद को कोटि-कोटि धन्यवाद दे देना अपना परम कर्त्तव्य समझता हूँ, जिसने विलुप्त होती लोक साहित्य को बचाने के लिए सक्रिय कदम उठाया है एवं प्रयास रत है। इस मोनोग्राफ के सन्दर्भ एवं प्रसंग के विषय में इतना ही कहूँगा कि,

'जो प्राप्त हुआ उसे हाजिर, आपके पास कर रहा हूँ,
भविष्य में कुछ और मिले, इसकी तलाश कर रहा हूँ,
समता, लघुता, दीर्घता चराचर जगत का अंग है,
यह मोनोग्राफ पसन्द आयेगा, यह तहे दिल से विश्वास कर रहा हूँ।

इन्हीं शब्दों के साथ त्रुटियों के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ। मोनोग्राफ आप लोक प्रेमियों को पसन्द आयेगा, इसी के साथ शत्-शत् प्रणाम कर रहा हूँ।

*बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'*

# हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र

इस सुदृढ़ समाज की बुनियाद लोक साहित्य, लोककला, लोकराग एवं लोकनृत्य पर स्थापित है। जब–जब लोक कलाओं पर कुठाराघात हुआ है, तब–तब सामाजिक ढांचा चरमराने लगा है और सुनामी, प्रलयकारी जैसी वाह्य अनैतिक प्रवृतियाँ अपना वर्चस्व कायम करने का प्रयास करती रहीं हैं। चूँकि मानव एक सामाजिक प्राणी है। असंख्य सुकर्मों के उपरान्त मानव योनि प्राप्त होती है, जिसे गोस्वामी तुलसीदास भी अपनी जगविख्यात 'रामचरित मानस' पवित्र पुस्तक में दर्पण की तरह दृष्टिगोचर करा चुके हैं, 'बड़े भाग्य मानुस तन पावा' इससे अमूल्य उदाहरण मानव एवं मानवता हेतु क्या हो सकता है?असामाजिक मानव साक्षात् दानव है। मानव को सामाजिक होना चाहिए और वह लोक साहित्य को अक्षुण रखकर ही सामाजिक हो सकता है। शास्त्रों ने यह तथ्य स्पष्ट कहा है कि,

साहित्य, संगीत, कला विहीन:,
साक्षात् पशु:, पुच्छ विषाणहीन:।

मानव एवं पशु में अन्तर केवल सामाजिकता ही कर सकती है, और सामाजिकता का मूल लोकसाहित्य, लोकराग, लोकगीत, लोककला एवं लोकनृत्य है। लोक कला का क्षेत्र असीमित है। किस्से, कहानी, नाटक, प्रहसन, एकांकी, सभी प्रकार के परम्परागत गीत, सभी प्रकार के सहज, सरल, परम्परागत गीतों पर संगत करने वाले वाद्य, कहावतें, ग्रामीण परिवेश की शिल्पकलायें आदि–आदि इनके असीमित क्षेत्र की कहानी मुक्त कण्ठ से कहते हैं। लोक कलायें अमर हैं एवं रहेंगी। इन्हे उचित संरक्षण एवं सुरक्षा की महती आवश्यकता है। लोकवाद्यों के क्षेत्र का विस्तार भी सुदूर तक है। अनेक प्रकार के लोकवाद्यों के बीच हुडुका (हुरूका) भी एक प्रकार का अति महत्वपूर्ण, समाज को पारदर्शी बनाने वाला, नि:शुल्क भरपूर मनोरंजन प्रदान करने वाला, सामाजिक ढाँचा को अटूट बनानें वाला, एकता का पर्याय, अल्प संसाधन वाला, सभी उत्सवों पर प्रयोग करने वाला, सामाजिक बुराइयों पर कुठाराघात करके बुराइयों का उन्मूलन करने वाला, स्वास्थ्यबर्द्धक, ज्ञानबर्द्धक, प्रतिभा सम्पन्न, बोधगम्य, समतामूलक समाज का संस्थापक, ईमानदारी को प्रश्रय देने वाला, समाज एवं देश विरोधी तत्वों को दण्डात्मक स्वरूप का दृश्य प्रस्तुत करने वाला, अति प्राचीन एवं अब तक नवीन रूप में कायम वाद्य हुडुका (हुरूका) है।



बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

# हुडुका (हुरूका) का इतिहास

हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के प्रार्दुभाव के दो कारण लगभग मिलते हैं, परन्तु विरोधाभास  बरकरार रहता है। पहले कथानक के अनुसार सृष्टि के निर्माणोपरान्त मानव तो धरती पर विद्यमान हुए परन्तु वे अभाषिक थे। अभाषिक मानव ही असभ्य, जंगली आदिवासी व असामाजिक के रूप में श्रेणीबद्ध किये जाते हैं। यह जग विदित तथ्य है कि भाषा की उत्पत्ति भगवान शंकर के डमरू से हुई है। भगवान शंकर एक पैर पर खड़े होकर अपने अड़भंगी रूप में तांडव नृत्य करने  लगे तो भाषा का आविर्भाव हुआ। उससे जो सूत्र निकले उसे माहेश्वर सूत्र कहते है जो अइउण्, ऋलृक, एओड्., ऐऔच्, हयवरट्, लण्, ञमड.णनम्, झभञ्, घढधष्, चपगडदश्, खफछठथचटतव्, कपय्, शषसर् एवं हल् हैं। माहेश्वर सूत्र की व्याख्या महर्षि पाणिनि ने किया था। भाषा की उत्पत्ति के उपरान्त सम्पूर्ण सृष्टि में खुशी की लहर दौड़ गयी। शिवजी तो भाषा की उत्पत्ति करके अर्न्तध्यान हो गये परन्तु समस्त वातावरण हर्ष से प्रफुल्लित हो गया। जो जहाँ था वही नर्तन करने लगा। समस्त मानव–दानव, जीव–जन्तु एक विचित्र तन्मयता एवं आवेश में आकर नाचने, कूदने, उछलने एवं अपने अन्दर निहित अर्न्तमुखी खुशी को बर्हिमुखी करके प्रसन्नता का इजहार करने

लगे। भूत भावन भगवान भोलेनाथ के गण जिन्हें बाद में अब गोंड कहा गया वे डमरूनुमा वाद्ययन्त्र बनाकर डमरू की तरह नहीं अपितु बीच में पकड़कर एक हाथ से पीट–पीटकर बजाने एवं गाकर नर्तक करने लगे। एक अजीब माहौल का अभ्युदय हो गया। सार्थक एवं निर्रथक दोनों प्रकार के गीतों का गायन करके अपने उमंग को विस्तारित करने लगे। चूँकि वे असभ्य एवं जंगली थे अतः, उसी वेश भूषा में भरपूर मनोरंजन एवं आनन्द उठाये। अभी आज भी जब हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को बजाया जाता है तो माहेश्वर सूत्रों की आवाज निकलती है, पारखी एवं विशेषज्ञ ऐसा बताते हैं।

दूसरे कथानक के अनुसार मध्य प्रदेश में अमर कंटक के पास मण्डला नाम का आदिवासी क्षेत्र वाला जनपद है। वहीं पर कचारगढ़ नामक एक पावन, रम्य, स्वच्छ एवं एकान्त स्थान है। वहाँ दो भाई बड़ा माढ़िया ( बड़ा भाई) एवं छोटा माढ़िया ( छोटा भाई) रहते थे। आदिवासी क्षेत्रों में भाई को माढ़िया भी कहते है। दोनों ही भाई असभ्य एवं जंगली होते हुए भी धर्मपरायण, सात्विक विचार वाले, समाज सेवक, पूजा पाठ के प्रति समर्पित एवं लोक कल्याणकारी प्रवृत्ति के थे। परोपकार उनके रग–रग में भरा था। रहन–सहन अमानुषिक होने के बावजूद भी वे कर्म के योगी एवं आस्था के प्रतीक थे। उसी कचारगढ़ में मानव बस्ती से सुदूर एकान्त एवं शान्त स्थान पर 'सज्जा' नामक एक सर्व सुलक्षण युक्त वृक्ष था। इस सज्जा का वहाँ वही महत्व था जो हमारे यहाँ वर्तमान में पीपल के पेड़ का महत्व है। यह सज्जा पूजन–अर्चन एवं आस्था का प्रतीक था। प्रत्येक ऋतु में सदा–सदा उसकी पूजा होती रहती थी। पूजन में नैवेद्य, जंगली पुष्प, पत्तियाँ, हवन, प्रसाद आदि होता था परन्तु, किसी भी प्रकार की बलि की परम्परा नहीं थी। सज्जा के पेंड़ की अर्चना हेतु तैयारी चल रही थी। दोनों माढ़िया (भाई) तल्लीन थे। तमाम पूजन सामग्री का इन्तजाम किया जा रहा था। पवित्रता एवं शुद्धता का विशेष ध्यान रखा जा रहा था। प्रसाद भी बन रहा था। सम्पूर्ण तैयारी के सम्पन्न होने के बाद एक अप्रिय घटना घट गयी। छोटा माढ़िया (भाई) की पत्नी रजस्वला थी। चूँकि सनातन धर्मानुसार स्त्री जब रसस्वला रहती है, उस समय शारीरिक रूप से अशुद्ध मानी जाती है। स्वयं उसे उस अन्तराल में एकान्त में रहना चाहिए। इसमें यदि कहीं से दूरदर्शिता का अभाव हो जाता है तो पारिवारिक एवं सामाजिक रूप से अनेकानेक हानियाँ आती हैं। दुर्भाग्य से प्रसाद छोटे माढ़िया (भाई) की औरत से स्पर्श हो गया। यह रहस्य किसी ने नहीं जाना। सब लोग व्यस्त रहने के कारण ध्यान तक नहीं दिये। प्रसाद अशुद्ध हो गया। अनभिज्ञता के कारण उसी अशुद्ध प्रसाद को नैवेद्य के रूप में चढ़ा दिया गया। दोनो भाई समस्त पूजन सामग्री को सज्जा के पेड़ के निकट ले जाकर रखे। पूजा प्रारम्भ हुई। अनभिज्ञता के कारण उसी अशुद्ध प्रसाद को नैबेध के रूप में चढ़ा दिया गया। सहसा सज्जा के पेड़ से एक गम्भीर ध्वनि आई ''पूजा हमें स्वीकार नहीं है, प्रसाद अशुद्ध है, किसी रजस्वला स्त्री का स्पर्श हो गया है''। यह वाणी बड़ादेव (शिव) जी की थी। दोनों भाई ध्वनि सुनकर विचलित हो गये। पूरा शरीर थर–थर काँपने लगा। सज्जा के पेंड़ को पकड़कर दोनों भाई फूट–फूटकर रोनें लगे। अनवरत महीनों–वर्षों तक रोते रहे। अन्न,

जल, नींद सबका परित्याग कर दिये। प्राण त्यागने पर उतारू हो गये। क्षमा याचना हेतु रोदन करने लगे। बड़ा माढ़िया (भाई) तनें को पकड़ा एवं छोटा माढ़िया (भाई) जड़ को पकड़कर कहने लगे कि ''अब हम लोग प्राण त्याग देंगे।'' दोनों भाइयों की अदर्शनीय दशा को देखकर अचानक बड़ादेव महादेव (शिव) अपने अड़भंगी रूप में प्रकट हुए। शिवजी का दर्शन होते ही दोनों भाइयों को ढाढ़स हुआ। शिवजी ने कहा कि अब मैं यहाँ नहीं रहूँगा। दोनो भाइयों की भक्ति से प्रसन्न होकर शिवजी ने अपना डमरू दे दिया परन्तु सतर्क किया कि तीन कोस के अन्दर इसे भूलकर भी नहीं बजाना। यदि ऐसा होगा तो मैं परमशक्ति से अपना डमरू वापस कर लूंगा एवं उसी प्रकार का एक दूसरा डमरूनुमा वाद्ययन्त्र दे दूँगा। कहा जाता है कि मानव जब उत्सुक होता है तो उमंग असीमित हो जाता है। उत्सुकता बस बड़ा माढ़िया (भाई) एक कोस दूर जाते ही उस शिवजी द्वारा प्रदत्त डमरू को बजाने लगा। शिव आज्ञा की अवहेलना हो गयी । शिव जी द्वारा प्रदत्त मूल डमरू गायब हो गया और एक दूसरा डमरूनुमा वाद्ययन्त्र आकाश से एकाएक बड़ा माढ़िया (भाई) के हाथ में आ गिरा। चूँकि बजाने का क्रम बन्द नहीं था। वाद्ययन्त्र गायब था, परन्तु हाथ वैसे ही हरकत कर रहे थे। जब डूप्लीकेट वाद्ययन्त्र अचानक हाथ में आया तो उसे भी दोनो माढ़िया (भाई) लगातार बजाते रहे। उसमें से पम-पम की ध्वनि निकल रही थी। कभी-कभी 'ऊँ' जैसा शब्द आता था। भाँति-भाँति की ध्वनियाँ उस वाद्ययन्त्र से निकलने एवं आने लगीं। तबसे डमरू की उत्पत्ति मानी जाती है। उसी डमरूनुमा वाद्ययन्त्र को आदिवासी, असभ्य लोग सामूहिक बजाने एवं उस पर गीत गाने की स्थिति पैदा किये। उत्सुकता इतना बढ़ी की सामूहिक नर्तन भी करने लगे। आदिवासियों की वेश-भूषा सामान्य लोगों से आज भी भिन्न होती है और तब तो थी ही। नर्तन करते-करते वे कभी-कभी स्त्री का रूप भी धारण कर लेते थे। जो संसाधन जहाँ मिल जाते थे उसी को लेकर वे वाद्य यन्त्र के ताल में प्रयोग करने लगते थे। इस प्रकार हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का प्रादुर्भाव हुआ।

# हुडुका (हुरूका) की बनावट

यह एक प्रकार की ध्वनि करने वाली लकड़ी जिसे (गम्भारि) कहते है, का बना हुआ वाद्य यन्त्र है। दोनों तरफ से गोल आकृति में चौड़ा तथा बीच का भाग पतला होता है, जो चौड़े भाग से समान दूरी पर होता है। यह वाद्ययन्त्र अन्दर से रिक्त होता है। वैसे तो यह नियमानुकूल है कि आवाज करने वाले समस्त यन्त्र अन्दर से खाली ही होते हैं। हुडुका (हुरूका) के मेखला का भार अधिकतम एक किलो ग्राम तक होता है। इसको बकरे के आमाशय की पतली झिल्ली को बाँस के पतले चीरे हुए अथवा लचकदार वाली लकड़ी का वृत्ताकार ढ़ाचा बनाकर दोनों तरफ से छवाई का काम करके बनाते हैं। तन्यता वाली लकड़ी के ऊपर पतली झिल्ली चढ़ाकर बनाये गये यन्त्र को 'पुरवा' कहते हैं। दोनों तरफ से पुरवा को सटाकर पतली डोरे की रस्सी से चारपाई के पश्चभाग के 'ओरिचन' की तरह उसे आवाज को नियन्त्रित करने के लिये कसा गया रहता है। हुडुका (हुरूका) के मेखला का बीच का भाग हाथ से पकड़ने के लिए अनुकूल होता है। पूरे वाद्य यन्त्र में विभिन्न प्रकार की ध्वनि निकालने के लिए एवं सुविधाजनक स्थिति से बजाने के लिए एक चौड़ी कम वजन की डोरी को वाद्ययन्त्र से लपेटकर कंधे में टांगने योग्य बनाया जाता है। कन्धे में लगी डोरी ही वास्तविक नियन्त्रण यन्त्र है। चूँकि हुडुका (हुरूका) को एक हाथ से ही वादन करते है जो एक उच्चतम साक्षात्कारों के लिए सामान्य ज्ञान का प्रश्न है, अतः कंधे की डोरी जब ढीला करते हैं तो आवाज में भारीपन होता है और जब खींचाव लाकर कसते है तो सदा पतली ध्वनि का जन्म होता है। वैसे चाहें ढीला करके बजाया जाय या कसकरके बजाया जाय हर हालत में माहेश्वर सूत्र ही उच्चारित होते है। चूँकि बकरे की पतली झिल्ली मौसमानुसार कमजोर एवं मजबूत होती रहती है अतः वादन करते समय नष्ट होने या टूटने–फूटने पर कार्य में बाधा न पड़े इसलिए वादक एक साथ कई हुडुके (हुरूके) या कई 'पुरवे' अपने साथ अग्रिम रूप में रखते है। तैयार एवं कार्यरत हुडुके (हुरूके) को सुरक्षात्मक दृष्टि से सुरक्षा हेतु लाल रंग के कपड़े में बाँध कर चलते समय या तो कन्धे में पीठ पर रखे रहते है या अनुपयोग की स्थिति में घर में खूँटी पर टांग कर रखते है। पूरे वाद्ययन्त्र का वजन डेढ़ किलो तक अधिकतम होता है। इसे बाँये कँधे में लटकाकर बाँये हाथ की मुठिया से बीच में पकड़ते हैं और दाहिने हाथ की अंगुलियों से बजाते है। चोट बिना नाप–तौल के ताड़ने पर पतली झिल्ली के टूटने का भय सदा बना रहता है। बाँये हत्थे वादक दाहिने कन्धे में हुडुका (हुरूका) को टांगकर बाँये हाथ से वादन को सम्पन्न करते है।



बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

## हुडुका (हुरूका) के साथ सह वाद्य यन्त्र

हुडुका (हुरूका) के साथ चार की संख्या में मात्र एक ही प्रकार का एक सहवाद्य यन्त्र बजाया जाता है जिसे मजीरा (मजूरा) कहते है। पंक्तिबद्ध अर्द्धवृत्ताकार रूप में मध्य में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का वादक एवं दायें तथा बायें पंक्तिबद्ध अर्द्धवृत्ताकार रूप में दो–दो की संख्या में चार मजीरा वादक होते है। मजीरा एक द्रव्य (धातु) शुद्ध फुल का बना होता है। यह दोनों हाथ में लेकर बजाया जाता है। लगभग पन्द्रह सेन्टीमीटर व्यास का यह वृत्ताकार वाद्ययन्त्र है। पूरे वाद्ययन्त्र के एक छोटे से वृत्ताकार भाग में अन्दर से गड्ढ़ानुमा धसा होता है तथा बाहर की तरफ उभार लिये हुए होता है। अन्दर से धसे एवं बाहर से उभार लिये हुए भाग के केन्द्र में एक छिद्र दोनों मजीरों में होता है। एक मजबूत रस्सी छिद्र में लगाकर अन्दर की तरफ एक वृहद गाँठ लगा देते है, और बाहर की तरफ उसी मजबूत रस्सी में एक कपड़े की मुठिया बाँध देते है ताकि वादन करने में सुविधा रहे। धँसे हुए भाग में रस्सी में गाँठ लगा देने से मजीरा बजाने में असफल नहीं होता है। यह रचना चार जोड़ा अर्थात् आठ मजीरों में रहता है। इनको रखने एवं ले जाने–ले आने के लिए मजबूत कपड़े या जूट के झोले बनाये गये रहते है।

## अन्य वाद्य यन्त्र एवं संसाधन

हुडुका (हुरूका) एवं मजीरा के साथ–साथ लोकनृत्य को रोचक एवं मनोरंजक बनाने के लिये कुछ अन्य वाद्ययन्त्र, संसाधन या सहायक सामग्री का प्रयोग भी इस वाद्य यन्त्र के साथ किया जाता है जो आदिवासी एवं असभ्यों के दिनचर्या, मनोरंजन, नृत्य एवं वाद्य में किये जाते है। जो सहायक सामग्री प्रयोग की जाती है उसमें प्रमुख निम्न हैं।

# लुकार

शीशे के बहुत बड़े चौड़े मुँह वाले बोतल में मिट्टी का तेल भर कर उसमें एक मोटे–पुराने कपड़े की बत्ती लगा देते है। बोतल के मुँह को मिट्टी से भली प्रकार बन्द कर देते हैं। यह आदिवासियों के मनोरंजन का प्रतीक है। इस लुकार को जलाकर एवं केन्द्र बिन्दु मानकर ही हुडुका वाद्ययन्त्र का वादन किया जाता है एवं लोकनृत्य, लोकगान होता है। यह परम्परा जब से हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का उदय हुआ तब से है और आज भी वर्तमान में है। बिना लुकार के यह वाद्य यन्त्र नहीं बजाया जाता है। यह एक प्रतिज्ञा है। जैसे–जैसे पूर्व के वादक, गायक, नर्तक किये है वे सारी गतिविधियाँ आज भी लुकार को केन्द्रित करके की जाती है।

# भरंगा (थेथरा)

यह बाँस के अग्र भाग को सावधानी से काटकर, उसे फाड़कर ऊपरी हिस्से पर लगभग दस चिकना–चिकना एवं लम्बा लचीला नीचे पकड़ने के लिये मुठिया वाला संसाधन है। इससे प्रहार करने पर चोट बहुत कम लगता है। वाद्य यन्त्र से सम्बन्धित लोक नृत्य को सरस, हास्यापद, रोचक एवं मुक्तकण्ठ से ठहाका मारकर हँसाने के लिये कलाकार प्रयोग करते हैं। यह एक दल में कम से कम दो एवं अधिक से अधिक चार होते है। यह पथ सुरक्षा में भी प्रयोग किये जाते है, तथा इसमें सामान आदि लटकाकर भी ढोया जाता है।

# कुबरी (बँकुड़ी)

यह बाँस का निचला बक्र भाग होता है, जहाँ से बाँस की उत्पत्ति होती है वहाँ से दो या तीन फुट ऊपर तक काटकर वक्र भाग में गाँठ वाले भाग पर मुँह, कान, आँख का स्वरूप बना दिया जाता है एवं, नीचे के भाग को पश्च भाग माना जाता है। इसका प्रयोग कलाकार अति हास्य रस प्रस्तुत करने के लिये करते है। इसके माध्यम से हास्य को चरम बिन्दु पर पहुँचाया जाता है। इसके माध्यम से कलाकार कुछ अति अश्लील एवं नहीं करने योग्य कार्यों को भी करते हैं लेकिन उनमें आदर्श एवं अनुकरणीय बिन्दु तथा उच्चकोटि का व्यंग होता है।

बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

# कृत्रिम घोड़ा

हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र एवं लोकनृत्य को रोचक बनाने के उद्देश्य से इसमें बाँस के फठ्ठे, लकड़ी के बनावटी घोड़े को एक रंग के लाल वस्त्र से बनाया गया कृत्रिम घोड़ा भी प्रयोग किया जाता है। बनावटी घोड़े का पैर नहीं होता है। पीठ पर का भाग काटकर आदमी के घुसने योग्य बना दिया जाता है। एक आदमी अपने पैरों पर खड़ा होकर कमर के सामने घोड़े को स्थिर करके लगाम पकड़कर नर्तन करता है तो ऐसा दृष्टिगोचर होता है कि सचमुच घोड़ा नाच रहा है। कृत्रिम घोड़े को पकड़कर पर्याप्त रिक्त क्षेत्र में अतिवेग से वह आदमी दौड़ता है तो लगता है कि घोड़ा सरपट दौड़ रहा है। कृत्रिम घोड़े का प्रयोग हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के नृत्य में चार चाँद लगा देता है।

# हुडुका (हुरूका) वाद्य में वादकों की संख्या

चूँकि मुख्य वाद्य यन्त्र हुडुका (हुरूका) ही है अतः इस वाद्य यन्त्र का वादक एक ही होता है। दो दाहिने तरफ एवं दो बायें तरफ मजीरा वादक होते हैं। कुल मिलाकर हुरूका एवं मजीरा सहित पाँच वादक होते हैं जो दूज के चन्द्रमाकार में खड़े होकर बजाने का कार्य प्रारम्भ करते हैं। तत्पश्चात लुकार को केन्द्र बिन्दु मानकर उसके चारों ओर वृत्ताकार में बैठकर एवं खड़े होकर अपनी समस्त स्तुति का कार्य करते हैं। स्तुति में वे सारे कार्य करते हैं जो आज भी आदिवासी लोग हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र का वादन करते समय करते हैं। इसके अतिरिक्त दसों दिशाओं में उठ–बैठकर तथा दौड़–दौड़ कर वादक वादन का कार्य सम्पादित करते हैं एवं अपनी विशेष कला का प्रदर्शन करते हैं। हुडुका (हुरूका) के साथ–साथ अन्य सहायक वाद्य यन्त्र, अन्य सहायक सामग्री का भी प्रयोग होता है तथा नर्तक, नर्तन का कार्य भी करते हैं।

# वादकों का गणवेश (पोशाक)

हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के मुख्य वादक का पोशाक नीचे धोती, कुर्त्ता सिर पर रंगीन बड़ी पगड़ी तथा पैर बिना जूता–चप्पल के नंगे रहते हैं यह पोशाक पूर्वी उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बिहार, आंशिक नेपाल तक प्रचलित है। परन्तु झारखण्ड, छत्तीसगढ़, उत्तरी मध्य प्रदेश, बुन्देलखण्ड एवं आंशिक उत्तरांचल में मामूली परिवर्तन को अंगीकृत किये हुए होता है। धोती

एवं कुर्त्ता मजबूत कपड़े का निर्मित कराया जाता है ताकि उछलते, कूदते, दौड़ते, लोटते समय नष्ट न हो। धोती को कमर में कसकर फेटानुमा बाँधते हैं ताकि किसी भी परिस्थिति में खुलने न पाये। कुर्त्ता के उपर रंगीन एवं चमकदार सदरी पहना करते हैं जो दिन एवं रात दोनों में शोभा वृद्धि कारक होती है। बकरे की आमाशय की झिल्ली से बना हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र वादन करते समय फूटने न पावे अतः सुरक्षात्मक दृष्टिकोण से वादक अंगुलियों मे कोई भी पहनने वाले गहने, लोहे की अंगुठी आदि नहीं पहनते हैं। हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र के साथ सहायक वाद्य यन्त्र मंजीरा बजाने वालों की संख्या चार होती है उनका गणवेश (पोशाक) भी मुख्य वादक के ढ़ाचा का ही होता है। मंजीरा वादक भी नीचे धोती, उसके ऊपर कुर्त्ता, कुर्ते पर सदरी एवं सिर पर रंगीन बहुत लम्बे कपड़े की पगड़ी बाँधते हैं एवं पीछे पीठ पर दो फीट पगड़ी वाला कपड़ा लटका रहता है। पगड़ी की मजबूती पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है ताकि वादन करते समय सिर को झकझोरने से पगड़ी हरगिज खुलने न पावे। स्फूर्ति के दृष्टिकोण से पहनावे पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

## नर्तक

हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र एवं नृत्य को सरस, सलिल एवं आनन्ददायक बनाने हेतु इसमें नर्तन की व्यवस्था रहती है। हालांकि जब इस वाद्य यन्त्र का आविष्कार हुआ उस समय नर्तन आदि की व्यवस्था नहीं थी। समाज बदलता गया और इस वाद्य यन्त्र का परिष्करण होता गया। प्रारम्भ में उत्साहित एवं आनन्दित जनाधार वादन करते समय मस्ती की स्थिति में स्वयं नर्तन भी करने लगते थे। जैसे–जैसे समाज का विकास हुआ अन्य मनोरंजन के संसाधनों के साथ हुडुका (हुरूका) में भी परिवर्तन की हवा प्रवेश कर गयी। अब यह वाद्ययन्त्र मात्र स्तुति का संसाधन ही नहीं अपित भरपूर मनोरंजन की एक इकाई बन गया। समयानुकूल इसमे पारदर्शिता का क्रम जारी रहा और मुख्य स्वरूप से अति विकसित रूप यह वाद्य यन्त्र लेने लगा। इसी क्रम में नर्तन एवं नर्तक भी हैं। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र लोकनृत्य के नर्तक प्रौढ़ावस्था के पुरुष ही होते है। इस वाद्ययन्त्र के साथ महिला नर्तकियों का आज तक प्रचलन व उपयोग नहीं हुआ है। सम्भवतः शिवजी का वाद्य होने का कारण महिला नर्तकियों को परहेज एवं प्रतिबन्धित कर दिया गया होगा जो अब तक वर्तमान है। इस वाद्ययन्त्र के साथ नर्तन करने वाले नर्तक सिर पर औरतों की भाँति लम्बे–लम्बे केश रखते है। नर्तन के समय केश को महिलाओं की भाँति चोटी एवं जूरा लगाकर बाँधते हैं,

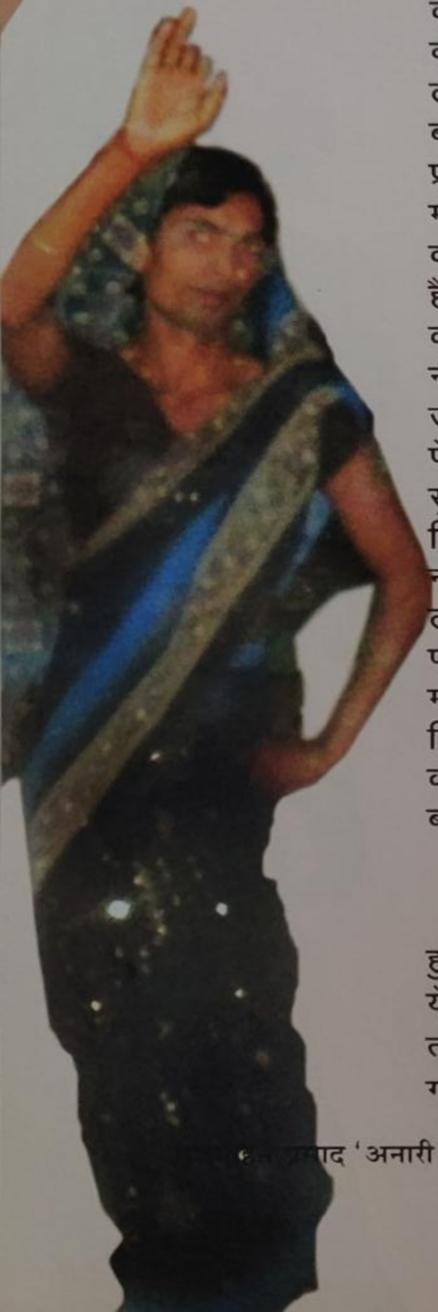

ललाट पर चौड़ी एवं चमकदार टिकुली साटते हैं, नाक में छिद्र बनवाकर महिलाओं के गहने छूंछी (कील) एवं नथुनी (नथिया) पहनते हैं। नाक के दोनो छिद्रों के बीच वाले भाग में छिद्र कराकर अति प्राचीन महिलाओं का गहना पहनते हैं जिसे नकबुला या नकबुली कहते हैं। उभय कर्ण में छिद्र कराकर कर्णफूल या बाला पहनते है। उभय आँखों में गाढ़ा एवं चौड़ा काजल लगाते हैं। अधरों पर होठलाली एवं आधुनिक मसाले से पेन्ट करके शोभायमान एवं आकर्षक बना लेते हैं। कृत्रिम कास्मेटिक सामग्री लगाने के बाद अभरक या अन्य चमकीला सौन्दर्य प्रसाधन लगाकर चेहरे को चमकीला मनमोहक एवं लुभावना बना लेते है। दोनों हाथों में पर्याप्त मात्र में चूड़ियाँ पहन लेते हैं। हाथ की अंगुलियों में भाँति–भाँति की अंगुठियाँ एवं छल्ले धारण कर लेते हैं। गले में कम मूल्य का सस्ता से सस्ता क्षणिक टिकाऊ महिलाओं का माला पहनते हैं। पैरों में इस्पात जैसे सस्ते लौह का पायल पहनकर पैर की अंगुलियों में सस्ते से सस्ते धातु की पैर की अँगुठी (बिछिया) पहनते हैं। सीने पर चमकीले वस्त्र का ब्लाउज पहन कर उसके नीचे जुराबे (चोली) पहल लेते हैं और उस चोली के नीचे दोनों स्तनों को स्त्रियों की भाँति उभारदार दिखाई देने के लिये फटे–पुराने कपड़े, रूई या स्पंज भर लेते हैं। कमर पर सर्वप्रथम पेटीकोट (साया) और उसके ऊपर चमकीली कम मूल्य की साड़ी को भली–भाँति मजबूत एवं सुरक्षित पहन लेते हैं। दाढ़ी एवं मूँछ के बालों को छिलवाकर समाप्त करा लेते हैं। कुल मिलाकर एक खूबसुरत नवयुवती की तरह दृष्टिगोचर होने का प्रयास करते हैं। अधिकतर नर्तक दलित वर्ग या आर्थिक व्यवस्था से कमजोर लोगों के घरों के ही होते हैं। वे कद में लम्बे–लम्बे होते है। एक हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र एवं नृत्य में न्यूनतम एक एवं अधिकतम पाँच नर्तक रहते हैं। उन्हें ''हुडुका (हुरूका) के नचनिया'' से सम्बोधित करते हैं। शिक्षित अल्प मात्र के होते हैं। अधिकतर नर्तक निरक्षर ही होते हैं, कुछ साक्षर होते हैं। इनके नर्तन के लिए किसी प्रकार के स्टेज (रंगमंच) की आवश्यकता नहीं पड़ती। ये नंगी जमीन पर ही कहीं और कभी भी दिन या रात, पथागमन करते समय खड़ा होकर वाद्य यन्त्र, सहायक वाद्य यन्त्र को बजाकर नाचने लगते हैं।

## नर्तन का ढंग

हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र के साथ नाचने वाले नर्तकों का नृत्य अन्य नर्तकों से भिन्न होता है। ये अपने दोनों हाथों को पीछे एक हथेली पर दूसरी हथेली को रखकर कमर पर रखते हैं, तत्पश्चात दोनों पैरों को बारी–बारी से आगे फेंककर नर्तन प्रारम्भ करते हैं। जब नर्तन गतिमान हो जाता है तो हुडुका (हुरूका) के ताल के मुताबिक बदन को लचका–लचका कर,

दौड़–दौड़ कर, कमर को हिला–हिलाकर भावनृत्य की भाँति गा–गाकर नर्तन करते हैं। ये महिलाओं की भाँति आपस में सहेली, ननद–भौजाई, सास–पतोहू आदि–आदि का काल्पनिक स्वरूप भी प्रदर्शित करते हैं। ये नर्तक सारे नाज–नखड़े दिखाते हैं जो एक पुरूष या महिला करते हैं। गीतों के अनुसार महिलावस्था में ही पुरूष भी बन जाते हैं। बीच–बीच में कुछ ऐसे कार्टूनिस्टों की भाँति कार्य करते हैं जिससे दर्शक हँसते–हँसते लोट–पोट हो जाते हैं। बच्चे, किशोर व युवतियाँ भरपूर आनन्द का अनुभव करते हैं।

## हरबोला, बोलिहा (जोकर)

आदिवासियों की भाँति अति विकृत एवं हास्यास्पद पोशाक जो प्राय: 80% चिथड़ा बन गया रहता है या यो कहें कि अर्द्ध नग्न अवस्था में दो पुरूष हाथ में भरंगा (थेथरा) या कुबरी (बँकुड़ी) लिये चेहरे को चूना, लाल सिन्दूर, कालिख से रंगे विचित्र हास्यापद रूप धारण किये हँसी के पात्र दो पुरूष हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र में अपनी कलाओं का प्रदर्शन करते हैं जिनको देखते ही गम्भीर से गम्भीर चिन्तन वाला व्यक्ति भी अपनी हँसी को रोक नहीं पाता है। उसे 'हरबोला', 'बोलिहा' या ठेठ की भाषा में 'जोकर' कहा जाता है, वह विद्यमान रहता है। सर्वप्रथम तो उसका बनावटी कुरूप चेहरा ही हँसी एवं मनोरंजन के लिये पर्याप्त होता है, परन्तु जब वह अपनी टूटी–फूटी भाषा में टूटे–फूटे कला का प्रदर्शन करने लगता है तो दर्शकों को हँसने की बीमारी लग जाती है। ये हरबोले नर्तकों के साथ नर्तन के काम को भी बखूबी अंजाम देते हैं। इनकी हरकतें हँसी का फौव्वारा छोड़ने लगती हैं।

## हुडुका (हुरूका) का क्षेत्र

हुडुका (हुरूका) मुख्य वाद्ययन्त्र है। इसकी उत्पत्ति आदिवासी जनों ने अपने आस्था एवं लगाव से किया। महादेव भगवान् शिव के वाद्य यन्त्र को सम्मानपूर्वक रखा जाता है। आरती या अन्य पूजनोत्सव के समय अनिवार्य रूप से बजाकर शिवस्तुति की जाती है। एक हाथ से हुक (धक्का) तथा दूसरे हाथ से चोट मारने के कारण इसे हुरूका नाम

भी दे दिया गया है। नेपाल देश में विश्वप्रसिद्ध आस्था के केन्द्र पशुपति नाथ जी का शिवालय है अत: नेपाल के तराई क्षेत्रों एवं भारतीय सीमा से सटे भाग पर इस वाद्य यन्त्र को हुडुका (हुरूका) के पर्यायवाची 'बारगू' नाम से उच्चारित करते हैं। जनमानस के बीच से ऐसी विश्वास से परिपूर्ण कथा मिलती है कि बारगू के बजाने से समस्त अनिष्टकारी ग्रह–गोचर समूल नष्ट हो जाते है। अपसगुन, सगुन में बदल जाता है। अमंगल, मंगल में परिवर्तित हो जाता है। नेपाल के शिवभक्त एवं हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र के कलाकार इसी ध्येय से वादन एवं गायन करते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बिहार की अपेक्षा नेपाल के हुडुका (हुरूका) 'बारगू' में मामूली अन्तर होता है। उनके पोशाक भी इन स्थानों से भिन्न होते हैं। हुडुका (हुरूका) की बनावट तो सम होती है परन्तु मजीरा और बड़ा एवं पतला होता है जिसमें से झन–झन की आवाज आती है। गीत भी मिश्रित भाषा के होते है। नृत्य भी पृथक किस्म का होता है। नेपाल में जब–जब 'बारगू' बजता है तो कुछ लोग शिवजी, नन्दी, भूत–प्रेत आदि का मुखौटा लगाकर सक्रिय हिस्सा लेते है। जुलूसों वैवाहिक कार्यक्रमों एवं अतिविशिष्ट व्यक्तियों के सम्मान में भी इस लोक वाद्य को वादन करके पारम्परिक स्वागत किया जाता है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में तो इस वाघ यन्त्र का साम्राज्य सा स्थापित था। एक जाति विशेष भड़भुजा (गोंड़ जिसे अब गोंड) के लिए तो यह मनोरंजन एवं अन्य सभी अवसरों हेतु सर्वस्व था। पश्चिमी सभ्यता का अन्धाधुन्ध प्रवेश होने के कारण एवं युवा वर्ग का आधुनिक हो जाने के कारण हुडुका (हुरूका) वाघ यन्त्र की उन्नति न होकर अवनति हो गयी है। पूर्व में गोंड़ जाति के लोग छठिहार, मुण्डन, वैवाहिक समस्त कार्यक्रमों, पूजनोत्सव एवं अन्तिम क्रिया श्राद्ध में जब बुजुर्ग स्वर्गवासी होते थे तब हर अवसरों पर इस वाघ यन्त्र को बजाकर, गाकर एवं नृत्य करके भरपूर आनन्द ही नहीं लिया जाता था अपितु नि:शुल्क समस्त मनोरंजन हो जाता था। पूर्वी उत्तर प्रदेश में आज भी यह वाघ यन्त्र यत्र–तत्र स्थापित है, परन्तु महत्वहीन होने का ग्रहण सा लगा हुआ है। पूर्वी उत्तर प्रदेश मे ही सोनभद्र एवं चन्दौली जनपद जो आदिवासी जाति के क्षेत्र हैं इस वाघ यन्त्र का स्वरूप कुछ बदला–बदला सा है। हालांकि अन्य गतिविधियाँउसी प्रकार की जाती हैं जैसे कि पूर्वी उत्तर प्रदेश के अन्य जिलों में होता है। सोनभद्र एवं चन्दौली की भाषा पूर्वी उत्तर प्रदेश से मामूली भिन्न होने के कारण गीतों, गणवेशों मे अल्प मात्रा में भिन्नता परिलक्षित होता है। शेष पूर्वी उत्तर प्रदेश में एकरूपता का ही बोलबाला दिखाई पड़ता है।

पश्चिमी बिहार में सारण, आरा, भोजपुर, बक्सर, भभुआ, सासाराम, औरंगाबाद, सिवान, गोपालगंज, वैशाली, पटना आदि–आदि जनपद आते है। भोजपुरी के शेक्सपीयर, अनगढ़ हीरा महानतम लोककलाकार स्व0 भिखारी ठाकुर, पूर्वी गीत के जन्मदाता स्व0 महेन्दर मिश्र, ऐतिहासक नर्तन के शौकीन स्व0 चाई ओझा, रामागिरि, स्व0 परमेश्वर शाहाबादी, स्व0 गायत्री कुमार ठाकुर जैसे लोक कलाकारों की धरती होने के कारण लोककलाओं को खूब सम्मान मिला, विस्तार हुआ एवं अद्यतन है। इन्हीं लोक कलाओं में हुडुका (हुरूका) भी है। पश्चिमी बिहार में

इस वाघ यन्त्र को पर्याप्त सुरक्षित एवं संरक्षित किया गया। आज भी कलाकार सम्मान पूर्वक इस वाद्य यन्त्र का वादन करके आकण्ठ आनन्द की अनुभूति करते हैं। पश्चिमी बिहार का हुडुका (हुरूका) के वादन का तौर–तरीका, वादकों के पोशाक, नर्तक एवं नर्तकों का पहनावा, हरबोलों की कारगुजारी, गीत, नाटक समस्त पूर्वी उत्तर प्रदेश से हुबहू मिलते–जुलते हैं। चूँकि भाषाई भिन्नता नहीं होने के कारण किसी प्रकार की समस्या न तो प्रदर्शित करने वालों को होती है और न तो श्रोता या द्रष्टा समाज को। पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बिहार के आर्थिक रूप से कमजोर प्रत्येक जाति–वर्ग के लोगों के प्रत्येक अवसरों के लिये यह वाद्य यन्त्र एवं इसके साथ का गीत, नृत्य, नाटक पूर्ण मनोरंजन का संसाधन है। एकही हुडुका (हुरूका) वाद्य से वैवाहिक अवसरों के समस्त कार्य सम्पादित हो जाते है और शुल्क के रूप में इच्छानुकूल उत्साहबर्द्धन, मनोरंजन तो भरपूर होता ही है, सामाजिक समरसता भी कायम रहती है।

बिहार को काटकर निर्मित झारखण्ड राज्य का 80% भाग आदिवासी क्षेत्र है। इस आधुनिकता की आँधी में भी वहाँ के निवासी वास्तविक आदिवासी की तरह अपना जीवन यापन करते हैं। उनका रहन–सहन, खान–पान, पहनावा, मनोरंजन, पारम्परिक रिति–रिवाज में नाममात्र का परिवर्तन हुआ है। वास्तव में लोक कला कहीं जीवित है तो वह आदिवासी क्षेत्रों में है। समस्त मांगलिक कार्यक्रम वे लोक स्तर पर ही सम्पादित करते हैं। इसी क्रम में हुडुका (हुरूका) भी आता है। आज भी झारखण्ड के वासी मांगलिक अवसरों पर बहुत बड़े शीशे के बोतल में मिट्टी का तेल भरकर, सूती मोटे अनावश्यक वस्त्र की वर्तिका बनाकर, बोतल के मुँह पर मिट्टी लपेटकर बहुत बड़े–चौड़े लौ वाले दीपक (लुकार) को जलाकर हुडुका (हुरूका) वाघ यन्त्र एवं सहयोगी वाघ यन्त्र मजीरा लेकर वृत्ताकार आकृति में बैठकर देवताओं को प्रथम में प्रसन्न करने का काम करते हैं एवं वही हुडुका (हुरूका) एवं अन्य सहयोगी वाद्य संसाधन पर्याप्त आनन्द का श्रोत बन जाता है। उत्तर प्रदेश एवं बिहार से अलग मामूली परिवर्तन के साथ यह वाद्ययन्त्र झारखण्ड के लोगों की सेवा करता है। वादन में मामूली सा फर्क जरूर प्रतीत होता है। गीतों की लय तो उत्तर–प्रदेश एवं बिहार की भाँति ही होती है परन्तु भाषाई अन्तर निश्चित तौर पर विद्यमान रहता है। चूँकि आदिवासियों की शारीरिक बनावट एवं रूप रंग आम लोगों से भिन्न होता है अतः लाख कृत्रिम सौंदर्य प्रसाधन का प्रयोग करने के बाद भी कलाकारों में भौतिक सुन्दरता का अभाव सा लगता है। आदिवासी हुडुका (हुरूका) वाघ यन्त्र के बादन, गायन एवं नर्तन में कलाकार छोटे–छोटे बच्चों को पीठ पर कपड़ें में बाँधकर एवं लटकाकर वादन, गायन एवं नर्तन का कार्य सम्पादित करते हैं। सब कुछ के बावजूद हुडुका (हुरूका) वाघयन्त्र का प्रभाव झारखण्ड में भी वर्तमान है।

बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

चूँकि छत्तीसगढ़ की भाषा, बोली, पहनावा, भोजन, संस्कृति, मांगलिक अवसरों, परम्पराओं एवं दिनचर्याओं में नहीं मिलता है। हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र के साथ यहाँ के कलाकार मजीरा चार ही बजाते हैं। नर्तन करने का तरीका भी ये अलग रखे हुए हैं। ये भगवान शंकर के तांडव नृत्य की भाँति एक पैर पर अधिकतम नर्तन करते हैं। बीच–बीच में नर्तक विभिन्न मनमोहक कलाओं का प्रदर्शन करते हैं। उदाहरण स्वरूप सिर पर थाली रखकर नर्तन करना, पैर से कप एवं प्याला फेंक–फेंककर सिर पर नाचते हुए सजाना, तपती तेज अग्नि पर नर्तन करना मुँह में से आग की लपट निकालकर दिखाना आदि–आदि हैरतअंगेज कलाओं का प्रदर्शन करके आश्चर्य में डाल देते हैं। छत्तीसगढ़ी भाषा में गाये जाने वाले गीत सरलता से समझ में आ जाते हैं। यह वाद्य यन्त्र छत्तीसगढ़ी लोगों के लिये वरदान स्वरूप है। किसी भी शुभ अवसर पर छत्तीसगढ़ी लोग हुडुका (हुरूका) का बादन–पूजन करके ही अन्य कार्यों को आगे बढ़ाते हैं।

उत्तरी मध्य प्रदेश के सांस्कृतिक विकास हेतु हुडुका (हुरूका) वाद्य यन्त्र को बुनियाद माना जाता है। पूर्व में की गयी चर्चाओं के अनुसार हुडुका (हुरूका) का जन्म मध्य प्रदेश ही है, अतः इस वाद्ययन्त्र के विकास की सम्पूर्ण जिम्मेवारी भी उत्तरी मध्य प्रदेश की होगी इसमें कोई शक नहीं है। मध्य प्रदेश की सांस्कृतिक धरोहरों में यह वाद्ययन्त्र सर्वोपरि है। यहाँ भी इस वाद्ययन्त्र की दशा एवं दिशा वही है जो छत्तीसगढ़ की है। हालांकि आधुनिकता ने हमारी सभ्यता एवं संस्कृति पर करारा चोट किया है परिणामतः यह वाद्ययन्त्र भी निश्चित तौर पर प्रभावित हुआ है। इसी कड़ी में छत्तीसगढ़ एवं उत्तरी मध्य–प्रदेश भी आते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में ही यह वाद्ययन्त्र अवशेष एवं विद्यमान है। शहरी क्षेत्रों में इस वाद्ययन्त्र पर ग्रहण लग चुका है। इस वाद्ययन्त्र को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने हेतु जनजागरण की आवश्यकता तथा युवाओं को अतीत के दर्पण में झाँकने के लिये प्रेरित करना चाहिए।

बुन्देलखण्ड में बुन्देलखण्डी लोकसाहित्य ने हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को प्रभावित करके इसे पीछे कर दिया है एवं स्वयं काफी आगे निकल गया है। यों कहा जाय कि यह वाद्ययन्त्र बुन्देलखण्ड में आक्सीजन पर चल रहा है। यदा–कदा विद्यमान है तो अन्य प्रान्तों से अलग छाप बनाये हुए है। न तो वादन की कला उपयुक्त है और न वादकों के पोशाक, नर्तकों की कला या श्रोताओं की दिलचस्पी। वाद्ययन्त्र के वादन करने का ढंग अलग, नर्तन की भाव भंगिमा पृथक, रोचकता में अल्पता, नीरस एवं अक्खड़ किस्म के गीत हुडुका (हुरूका) को पीछे धकेलने के लिए पर्याप्त हैं। बुन्देलखण्ड का हुडुका वाद्ययन्त्र अब नाम मात्र का रह गया जो इतिहास के पन्नों की शोभा बढ़ा रहा है। हालांकि बुन्देलखण्डी गीतों का भी भविष्य बहुत प्रकाशमान नहीं दिखता। 'हम तो डूबे सनम, तुमको भी ले डूबे' वाली गीत की कतार बनकर रह गयी है। चूँकि बुन्देलखण्ड का इतिहास वीरता से भरा पड़ा हुआ है एवं आध्यात्म दोयम दर्जे पर है इसीलिये हुडुका (हुरूका) को जितना लोकप्रिय, जनप्रिय होना चाहिये उतना नहीं हो पाया।

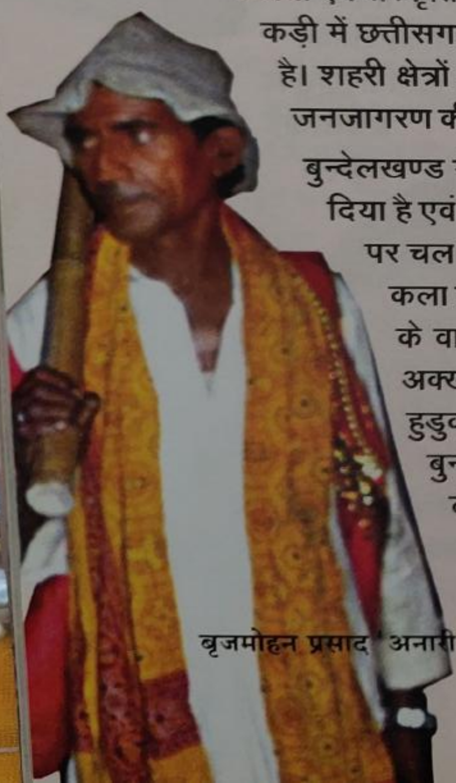

बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

उत्तराखण्ड में भी हुडुका (हुरूका) को जो सम्मान मिलना चाहिए, नहीं मिल पा रहा है। यदा–कदा इस वाद्य यन्त्र की उपस्थिति है परन्तु जो आनन्द का श्रोत पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बिहार की तरफ मिलता है वह नहीं मिल पा रहा है। क्षेत्रीय गीत–संगीत, नृत्य यथा कुमाँयुनी, गढ़वाली आदि कलाओं ने सर्वत्र उत्तराखण्ड में अपना प्रभुत्व जमा रखा है। इन विश्व प्रसिद्ध गीतों, नृत्यों, कलाओं के मध्य हुडुका (हुरूका) मामूली ढाचा गत परिवर्तन के साथ विद्यमान है यह बहुत बड़ी बात है। उत्तराखण्ड के हुडुका (हुरूका) वादक अलग तरीके से वादन करते हैं, परन्तु उनके द्वारा निर्गत ध्वनि में भी माहेश्वर सूत्र का ही अर्थबोध कराता है। पुरूष एवं स्त्री वेशधारी पुरूष दोनों ही आत्म विभोर होकर नर्तन करते है। कुमायूँनी, गढ़वाली, हिन्दी, भोजपुरी, आदि–आदि कई भाषाओं से मिश्रित गीत इनके साथ गाये जाते हैं।

## हुडुका (हुरूका) से निर्गत ध्वनि की व्याख्या

हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र की ध्वनि सा, रे, ग, म, प, ध, नी, ध, प, म, ग रे, सा स्वर पर आधारित नहीं होता है। इसके प्रत्येक गीतों पर जो वाद्य वादन किया जाता है वह दादरा–छः मात्रा एवं कहरवा आठ मात्रा का ही वादन किया जाता है। इस वाद्य यन्त्र के वादक अधिकतर निरक्षर एवं साक्षर होते है, इसलिये ताल में वादन करने के बावजूद उन्हें ताल–मात्रा का ज्ञान नहीं हो पाता। वैसे हुरूका वाद्ययन्त्र के प्रत्येक वादनों मे माहेश्वर सूत्रों की पुनरावृत्ति होती है। इनकी ध्वनि कर्णप्रिय एवं मनोहारी होती है। जैसे अन्य वाद्यों में सभी ताल–सुर समाहित होते हैं वह बात हुडुका (हुरूका) में नहीं होता है। इसके साथ दादरा एवं कहरवा को ही गतिमान एवं गतिमन्द करके बजाया जाता है। वादन मात्रा से विचलित होने पर हर प्रकार के श्रोता को महसूस होने लगता है। व्यतिक्रम को कोई भी पहचान सकता है। हुडुका (हुरूका) के विशेषज्ञ वादक भी यह बात स्वीकार करते हैं कि यह दुनिया के अन्य वादनों से पृथक वाद्ययन्त्र है। ध्वनि को पतला या मोटा करना वादक के हाथ की कला होती है। कन्धे में लटकी डोरी से सम्पूर्ण वाद्ययन्त्र का नियन्त्रण किया जाता है। जब वाद्ययन्त्र के बीचोबीच भाग को एक हाथ से मुठिया की भाँति कसकर पकड़कर कन्धे की डोरी को ढ़ीला कर देते हैं तो आवाज में भारीपन यानी भद्–भद् की आवाज आने लगती है एवं कन्धे की नियन्त्रण डोरी को खींचकर एवं तानकर वादन करते है तो टन्–टन् या पम–पम की आवाज आती है। कुछ वादक हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का वादन करते समय धीरे–धीरे मुँह से भी वैसी ही ध्वनि का निष्कासन करते हैं परन्तु हुरूके के ध्वनि के आगे गौड़ पड़ जाता है। इस वाद्ययन्त्र का वादन मात्र पाँच अंगुलियों से ही करते हैं। किसी प्रकार का थाप, ठेका नहीं लगाया जाता है। वाद्ययन्त्र की बनावट कहिये या भगवान शंकर की कृपा, हवा के साथ हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र की ध्वनि दो किलोमीटर तक रात में सुनाई देती है जबकि वायुवेग के विपरीत एक किलोमीटर के परितः सुनाई पड़ती है।

बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं सम्बन्धित नृत्य के अवसर

पूर्व में चर्चा किया जा चुका है कि यह वाद्ययन्त्र आर्थिक दृष्टिकोण से दुर्बल, अशक्त एवं पिछड़े एवं दलित वर्ग का वाद्ययन्त्र एवं नृत्य है। वर्तमान परिवेश में यह उच्च से उच्चतम वैभवशाली एवं चर्चित हर वर्ग–जाति के लोगों के किसी भी अवसर पर मजबूरन नहीं अपितु शौक के नाम पर प्रयोग किया जा रहा है। पहले जिस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित नृत्य को हेय दृष्टि से देखा जाता था वही आज शोभा वृद्धि के माध्यम के रूप में प्रयोग किया जाता है। चूँकि यह वाद्ययन्त्र एक जाति विशेष भड़भुजा (गोंड़ जिन्हें अब गोंड) का ही अन्वेषण है जैसा कि पूर्व में बताया जा चुका है अतः यह उसी जाति विशेष के प्रत्येक प्रकार के मनोरंजन में सदुपयोग के तौर पर प्रयोग किया जाता रहा। क्रमशः गतिमान समय परिवर्तित होता गया और यह पीछे के अन्तराल में आर्थिक रूप से तंग सभी जातियों के मनोरंजन का कारक बनता गया। यह मानव के सभी संस्कारों के लिये उपयुक्त माना जाता है। जब जीव मानव शरीर पाकर नवजात रूप में धरती पर आता है तो बाल रूप पाने पर इस वाद्ययन्त्र को बजाकर एवं नर्तन करके विख्यात लोकराग की गीत सोहर एवं खेलवना को गाकर अपने हृदय की उमंग को माता–पिता एवं परिवार के अन्य जिम्मेवार व्यक्ति अपने खुशी का इजहार करते है। बदले में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के बादक, नर्तक को उचित सम्मान के साथ अमिट चिन्ह देकर प्रतिष्ठापूर्ण एवं मनोह्लाद पूर्ण वातावरण में सादर बिदा किया जाता है। संस्कार में आगे बढ़ने पर मुण्डन में इस वाद्ययन्त्र, नृत्य गीत को अनिवार्य रूप से प्रयोग किया जाता है। मुण्डन दल के लोग गाते, बजाते, नाचते, मुण्डन संस्कार को करते है अतः घर से लेकर मुण्डन स्थल तक इस वाद्ययन्त्र का प्रयोग उस परिवार के लिये गौरव का विषय होता है। रास्ते में, मुण्डन स्थल पर, स्थान–स्थान पर श्रोता मनोयोग से इस वाद्ययन्त्र का वादन कराकर आनन्द की अनुभूति करते हैं। समस्त वैवाहिक कार्यक्रम चाहे वरपक्ष का हो या कन्यापक्ष आदि से लेकर अन्त तक यह वाद्ययन्त्र समस्त कार्यक्रमों का सम्पादन कराता है। वरपक्ष–कन्यापक्ष के रस्मों–रिवाजों को सम्पादित करने हेतु इस वाद्ययन्त्र के उपस्थित रहने पर अन्य वाद्ययन्त्रों की आवश्यकता एकदम नहीं पड़ती है। वरपक्ष एवं कन्यापक्ष के

द्वार से लेकर सम्पूर्ण छोटे–बड़े रस्मों में इस वाद्ययन्त्र का प्रयोग किया जाता है। तत्पश्चात पूरी रात बाराती–घाराती एवं अन्य समीपस्थ इच्छुक तथा पुरूष–महिला, बालमण्डली के लिए पूरी रात भरपूर मनोरंजन यदि कोई देता है तो वह हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र ही है। अन्तिम समय में भी यह वाद्ययन्त्र साथ नहीं छोड़ता। इस मृत्युलोक एवं नश्वर संसार में यदि कोई कटु सत्य है तो वह मृत्यु ही है। मृत्यु अवश्यम्भावी है। समय एवं कुसमय का जिक्र छोड़ दिया जाय तब। जब मानव उचित समय में इस नरतन का परित्याग करता है तो भी हुडुका वाद्ययन्त्र साथ देने का कार्य करता है। घर से श्मशान घाट तक अपना कार्य अदा करने में कोई कोताही नहीं करता। भजन, निर्गुन, गीतों के साथ यह मानव जीवन की उपयोगिता, नेकी–बदी, सुकर्म–कुकर्म के परिणाम की दिशा–दशा का स्पष्ट चित्रण करते हुए मानव को एक आइना दिखाने का कार्य करता है। दुनिया के किस वाद्ययन्त्र में ये समस्त गुण विद्यमान हैं। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र 'आल इन वन' है। चूँकि हुडुका (हुरूका) की उत्पत्ति एक जाति विशेष भड़भुजा (गोंड़ जिन्हें अब गोंड) के अथक प्रयास का परिणाम है, इतिहास बताता है। इस वाद्ययन्त्र की उत्पत्ति श्रावण शुक्ल सप्तमी को माना जाता है। अतः इसके वादक, नर्तक, गायक इस दिन को वार्षिकोत्सव के रूप में मनाते है। यह क्रम उस समय प्रारम्भ हुआ और आज भी जारी है। वाद्ययन्त्र के सेवक, दस दिन पूर्व से ही व्यवस्था में लग जाते हैं। प्रत्येक घरों से चन्दा इकठ्ठा करके श्रावण शुक्ल सप्तमी को धूमधाम से पूजन, स्तवन एवं उमंग का प्रदर्शन करते हैं। किसी पीपलनुमा पेंड़ के नीचे इकठ्ठा होकर बोतल में मिट्टी तेल भरकर (लुकार) जलाकर वृत्ताकार भाग में खड़े हो जाते हैं। केन्द्र में लुकार को रखकर नये–नये लाल रंग के एक रंग वाले वस्त्र पहनकर सात फेरे लुकार का देते हैं एवं भक्तिभावना से भरे हुए गीतों का गायन करते है। इसे 'बाहरवार का पूजा' नाम देते हैं। यह क्रम दिनभर चलता रहता है। हालांकि पूजा में स्त्री, पुरूष, बच्चे, बृद्ध सभी सहभागी होते हैं परन्तु वाद्ययन्त्र के वादन एवं नर्तन में पुरूष ही सम्मिलित होते है। दर्शक एवं सहयोगी के रूप में भड़भुजा (गोंड़ जिन्हें अब गोंड) के अलावा अन्य जाति–धर्म के लोग भी अपनी उपस्थिति दर्ज कराते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि इस वाद्ययन्त्र का उपयोग प्रत्येक अवसरों पर, प्रत्येक जातियों के लोगों हेतु किया जाता है। वर्तमान में यह जाति विशेष का वाद्ययन्त्र नहीं है अपितु जनमानस एवं सर्वजन के लिये हो गया है। जहाँ–जहाँ या जब–जब इस वाद्ययन्त्र का वादन किया जाता है, इसकी छाप लम्बे दिनों तक स्थायी रहती है। लोग रिक्त हाथों पर भी अनुकरणात्मक रूप में वादन करके आनन्द का अनुभव करते है। यह सर्वग्राह्य एवं सर्वप्रिय वाद्ययन्त्र है। अल्पतम खर्च में विभिन्न अवसरों पर यह अपना अमिट छाप छोड़ता है। हालांकि कुछ अश्लीलता एवं नहीं देखने योग्य कलायें इसमें प्रस्तुत की जाती हैं परन्तु उनका सारांश एवं उद्देश्य सामाजिक बुराइयों का प्रक्षालन ही होता है। वर्तमान में हुडुका (हुरूका) बड़प्पन का प्रतीक बन गया है। जिसे सम्पन्न समाज हेय दृष्टिकोण से देखता था, उसे अब आवश्यकता के रूप में अंगीकार किया जाता है, यह वाद्ययन्त्र का विकास एवं लोकप्रियता नहीं है तो क्या है?

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र

## नृत्य को सम्पादित करने हेतु आवश्यक तैयारियां

मनोरंजन की दुनिया भी अब अत्यन्त विकसित हो चुकी है। नये–नये वाद्ययन्त्र, कम्प्यूटराइज्ड व्यवस्थायें, नई तकनीकी, नये इन्स्ट्रूमेन्ट एवं नवीनता से एक नई दुनिया की तस्वीर सामने झलक रही है। जो भी नूतन वाद्ययन्त्र आविष्कारित हो रहे हैं उनके लिए नई तकनीकि अत्यन्त आवश्यक हो जा रही है। बिना नवीनता के नये वाद्ययन्त्रों से मनोरंजन असम्भव है। कुल मिलाकर नये वाद्ययन्त्र पराश्रित होकर आज के बाजार में आते हैं, जबकि हुडुका (हुरूका) आधुनिकता से कोसों दूर है। इस वाद्ययन्त्र एवं सम्बन्धित नृत्य से मनोरंजन करने हेतु न तो विशालतम् साज–सज्जा का मंच चाहिए और न प्रकाश हेतु आधुनिक फोकस। यहाँ तक कि ध्वनि विस्तारक यन्त्र की भी कोई आवश्यकता नही पड़ती है। हाँ फैशन के इस युग में उपरोक्त विषय से हटकर कहीं–कहीं अपवाद निश्चित मिलता है, परन्तु इस प्रजातान्त्रिक भारतीय व्यवस्था में बहुमत को ही प्राथमिकता दी जाती है अतः यह निःसंकोच कहना पड़ेगा कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र हेतु बहुत अधिक आधुनिकता की आवश्यकता नहीं है। यह वाद्ययन्त्र मानव बस्ती से विलग एकान्त स्थित खेत, मैदान, बगीचे, या सार्वजनिक स्थान पर वादन, गायन, नर्तन हेतु उपर्युक्त होता है। एकान्त स्थान का चयन इसलिये किया जाता है ताकि यदा–कदा इस वाद्ययन्त्र की कला का प्रदर्शन करते समय मनोरंजन हेतु अश्लील गीत, शब्द एवं प्रयोगात्मक कार्यों का भी प्रदर्शन करना पड़ता है।

प्रकाश हेतु बाँस के छोटे–छोटे लगभग दस फीट के खम्भों को गाड़कर उस पर पेट्रोमेक्स बिजली के बल्ब या अन्य प्रकाश उत्पन्न करने वाले संसाधन को लटका दिया जाता है। यत्र–तत्र छोड़कर इसमें पर्दे की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। कलाकार नंगी जमीन पर अपनी कलाओं का उछल–कूद एवं दौड़कर प्रदर्शन करते हैं। ध्वनि विस्तारक यन्त्र इसलिये प्रयोग नहीं किया जाता है ताकि किसी भी वादक, गायक, नर्तक, कलाकार को स्थिर होकर अपनी कला का प्रदर्शन नहीं करना पड़ता है। दर्शक एवं श्रोता से दस फुट सुदूर होकर वृत्ताकार रूप में बैठते हैं उनके लिए भारतीय पद्धति से जमीन (बिना गद्दा, कारपेट एवं चादर) पर बैठने की व्यवस्था होती है। इससे बड़ा समरसता, समानता का उदाहरण क्या हो सकता है? लघु नाटिकाओं, प्रहसनों, एकांकी के प्रयोग के समय कुछ वस्तुएँ अवश्य उपयोग की जाती हैं जो सबके घरो में आसानी से उपलब्ध होती है। यथा–आटा, चूना, सरसों का तेल, कालिख, मिट्टी के छोटे–छोटे बर्तन, पूड़ी, दही, सब्जी, टूटी चारपाई, सूखी जलावन की लकड़ी आदि–आदि। वाद्ययन्त्र हुरूका को संयमित रहकर उसे सर्वस्व मानकर व्यवस्था से रखा जाता है ताकि अपमान न होने पावें। एक साथ दो या तीन–तीन हुडुका (हुरूका) अग्रिम तौर पर रखे जाते हैं ताकि कार्यक्रम प्रस्तुत करते समय एक वाद्ययन्त्र के क्षतिग्रस्त होने पर अबिलम्ब दूसरा प्रयोग मे लाया जा सके ताकि अन्तराल एवं व्यवधान न पड़ने पावे। नर्तक सिर पर हाथ रखकर दौड़–दौड़ कर नर्तन करते है। यह कला यह प्रदर्शित करती है कि हम अपने पूर्वजों के प्रति श्रद्धानवत हैं और हमारी कलाकारी का मुकाबला कोई नहीं कर सकता है। नर्तक, हरबोला, जोकर, वादक अपनी–अपनी साड़ी–साया, ब्लाउज और सौन्दर्य प्रसाधन का सामान, पोशाक, सहायक सामग्री अपना लेकर आते हैं एवं अपने पास रखते हैं। वाद्ययन्त्र को कमो–वेस सभी कलाकार वादन करते हैं परन्तु सुयोग्य एवं दक्ष को ही प्राथमिकता दी जाती है। वाद्ययन्त्र का वादन प्रारम्भ करने मे सभी जाति–वर्ग के लोग साहायिक होते हैं। चूँकि इस वाद्ययन्त्र को बजाने वाले एवं सम्बन्धित नर्तन, गायन की समस्त व्यवस्था मोबाइल होती है अतः कला प्रदर्शन का कोई निश्चित स्थान तो होता ही है, समय एवं श्रोता मिलने पर कहीं भी कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करके लोकप्रियता भी पाते हैं।

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र

## सम्बन्धित नर्तन गायन एवं वादन का सट्टा (मूल्य)

इस वाद्ययन्त्र की उत्पत्ति बड़ी ही कठिनाई से प्रतिकूल वातावरण में हुआ। तब यह सोच नहीं थी कि इस वाद्ययन्त्र का वादन, गायन एवं नर्तन इतना लोकप्रिय होगा। लम्बे समय तक इसका उपयोग इसी भाँति एवं आस्था की पूर्ति हेतु ही किया जाता था। इस वाद्ययन्त्र में किसी प्रकार की अश्लीलता एवं अनर्गल बातों का स्थान ही नहीं था। शिवजी के गण जिन्हें बाद में अब गोंड कहा गया वे ही इसे धरा पटल पर लाये और आत्मसात भी किये अतः यह लम्बे समय तक बहुत

अधिक पूज्यनीय था। वर्तमान में आस्था में कमी जरूर हुई है। समय धीरे–धीरे बदलता गया। वातावरण परिवर्तित हुआ, भोजन, पहनावे, रहन–सहन में भी परिवर्तन की बीमारी ने स्थान बना लिया। इस प्रभाव से हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र भी अछूता नहीं रहा। इस वाद्ययन्त्र के समर्पित लोग अब इसे पूजा पाठ तक ही सीमित नहीं रहने दिये बल्कि मनोरंजन का सहज साधन बना दिये। सर्वप्रथम गोंड़ जिन्हें अब गोंड जैसे आदिवासी स्वानन्द एवं स्वजातीय, स्व समाज, पास–पड़ोस के उत्साहबर्द्धन एवं संगठन को सशक्त बनाने हेतु इस वाद्ययन्त्र को मनोरंजन का साधन बना डाले। एक दूसरे के घरों में होने वाले शुभ अवसरों पर मिल–बैठकर सहयोग–सद्भाव लेकर वादन, गायन एवं नर्तन करने लगे। हालांकि शुल्क (सट्टा) का प्रचलन तब न तो था, और न वे लेते थे। आपसी संगठन, मित्रता, सद्भाव बना रहे इसी को प्राथमिकता दिया जाता था। तत्पश्चात गोंड़ जाति के अलावा अन्य जाति के लोग भी गोलबन्द होकर मनोरंजन के रूप में प्रयोग करने लगे। उत्कृष्ट कला में प्रदर्शन के कारण यदा–कदा इन्हें पुरस्कार स्वरूप कुछ वस्तुएं एवं कुछ नकद मुद्रा भी प्राप्त होने लगी। कहा जाता है कि सुविधायें मनुष्य को लोभी बना देती हैं। आमद बढ़ने से इस कला के कलाकारों का मनोबल तो बढ़ने ही लगा, इच्छाशक्ति भी प्रबल होने लगी। नई–नई विधाओं एवं कलाओं का प्रयोग करके इस वाद्ययन्त्र को सर्वप्रिय बनाने का प्रयास जारी रहा। कुछ समय बाद हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र में अत्यन्त परिमार्जन हो गया और विकास के पंख लग गये। अब यह लोक वाद्ययन्त्र समाज सुधार का सशक्त माध्यम होते हुए मनोरंजन के चरम पर पहुँच गया। कलाकारों की आँखे खुलीं तब तक मानव काफी चिन्तक, हानि–लाभ का ज्ञाता एवं विचारक बन चुका था। उसके जेहन में यह बात कुरेदने लगी कि हाड़–तोड़ परिश्रम से कला का प्रदर्शन मात्र पेट भरने का ही संसाधन नहीं है। यह उस समय की बात है जब मानव पारिवारिक, मूलभूत आवश्यकता वाला तथा सामाजिकता का निर्वहन करने हेतु जरूरतों की पूर्ति वाला बन चुका था। आवारों की तरह रात–दिन भ्रमण करने, केवल पेट पालने, पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति में अभाव आने से घरेलू परिस्थिति दयनीय होने लगी। यदा–कदा दुर्व्यसनों का भी संसर्ग हो जाया करता था। वाद्ययन्त्र के कलाकार वादक, गायक, नर्तक इस पर चिन्तन करने लगे। अन्त में उन्होनें अपने समूह के साथ विचार विमर्श के उपरान्त यह फैसला किया कि नाममात्र मुद्रा या बदले में अन्न आदि लेकर पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति की जाय एवं स्वयं स्वतन्त्र रहा जाय। तब से ही सट्टा (मूल्य) का प्रारम्भ हुआ। दिन–रात लगातार कई दिनों तक अनवरत कार्यक्रम प्रस्तुत करने के कारण वे शिथिल हो जाते थे। अब यह वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित गायन, बादन, नर्तन गुटबाजी की गिरफ्त में आ गया। नकल करके लोग कलाकारी में पारंगत होते गये और गोलबन्दी करके आमदनी का श्रोत समझने लगे। प्रारम्भ में बहुत कम सट्टा लिया जाने का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। यदा–कदा निर्धन एवं असहाय परिवारों के उमंग से एवं मनोबल को आगे बढ़ाने के लिए नि:शुल्क वाली परम्परा कायम रही। अपने रिस्तेदारों, पट्टीदारों, गुरुओं, समाज के सम्मानित व्यक्तियों, शार्गिदों एवं समाज के उपेक्षित लोगों के लिए वे नि:शुल्क सेवा अपने मेहनत के बल पर करते

थे। समय चक्र गतिमान होता है। परिवर्तन इस प्रकृति का नियम है। परिवर्तन का क्रम जारी रहा और इस वाद्ययन्त्र की लोकप्रियता ने इसे मनोरंजन का संसाधन न रहने दिया बल्कि, आय का श्रोत बना दिया। बनावे भी क्यों नहीं ?हाड़–तोड़ मेहनत करने वाला कलाकार कब तक अपने परिवार को भूखों रख सकता है। आवश्यकताएं अनन्त हैं, और उनकी पूर्ति तो होनी ही चाहिए। आवश्यकताओं ने इसे कला का प्रदर्शन नहीं अपितु दुकान का स्वरूप दे दिया। एक व्यक्ति स्वयं मालिक (मुखिया) बन जाता था और लगभग दस लोगों को एकत्र करके स्वयं का एक दल (पार्टी) बना लेता था। इस प्रकार इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित कलाओं की बाढ़ सी आ गई। एक गाँव–इलाके में तीन–तीन से चार–चार दल या उससे कम एवं अधिक दल अपना प्रभुत्व दिखाने लगे। सट्टा (मूल्य) लेने की होड़ सी लग गयी। कुछ समय तक पहले कलाकारों की दैनिक मजदूरी पर ही यह वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित लोककला का प्रचलन एवं प्रदर्शन रहा। जो सट्टा (मूल्य) मिलता था, उसे मेहनत एवं कला के अनुसार वितरित कर दिया जाता था, मुखिया जिसे मालिक कहते हैं, वह या तो सबसे अधिक रकम लेता था या अन्य कलाकारों को संतुष्ट करने हेतु कुछ नहीं पाता था। कारण यह था कि दल में फूट न पड़ने पावे। दल के फूट जाने पर नाना प्रकार की परेशानियाँ होती थी एवं नये दल के कलाकारों को व्यवस्थित करने में नाहक अनेकानेक परेशानियों का सामना करना पड़ता था। कुछ समय तक तो यह व्यवस्था चली परन्तु पुनः परिमार्जन का क्रम होता रहा। वाद्ययन्त्र का मुख्य वादक लिप्सावश अधिक धन की मांग करने लगे। प्रतिद्वन्दिता में नर्तक भी पीछे नहीं रहे। फलतः मजबूर होकर दल के मुखिया को पार्टी (दल) के हित में एवं लोगों की मांग की पूर्ति हेतु सट्टे का दर बढ़ाना अति आवश्यक हो जाता था। इस प्रकार यह वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित कलायें दिन प्रतिदिन महंगी होती चली गयीं। एक तरफ दर बढ़ता गया और दूसरी तरफ पश्चिमी सभ्यता के भारत देश पर प्रभाव डालने के कारण अपने को सबसे अलग एवं आधुनिक बताने के होड़ में समाज, श्रोता एवं युवा पीढ़ी लोककलाओं के प्राचीन मनोरंजन के साधनों का अनादर एवं उपेक्षा करने लगे। नतीजा यह हुआ कि लोक कलाओं का ह्रास होने लगा। आज के परिवेश में लोक कलाओं का अभाव सा हो गया है। वाद्ययन्त्र के कलाकार अधिक अर्थोपार्जन के दृष्टिकोण से ग्रामीण क्षेत्र छोड़ कर शहरों की तरफ अन्धाधुन्ध पलायन करने लगे हैं। कलाकारों के अभाव एवं आधुनिकता के प्रभाव से प्रभावित होने से लोक कलाओं पर ग्रहण सा लग गया है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित कलायें भी इससे अछूती नहीं है। फलतः वर्तमान परिवेश में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र कम मिल रहे हैं। इसका एक मुख्य कारण विभिन्न सरकारों एवं सरकारी संस्थाओं द्वारा अनेक कल्याणकारी योजनाओं के क्रियान्वयन से कलाकार का रूख उनकी तरफ हो गया। जो शेष कहीं–कहीं वाद्ययन्त्र हुडुका (हुरूका) बचे हुए है, उसमे अब ठेकेदारी प्रथा प्रभावशाली हो गयी है। दल को चलाने वाले मुखिया पूरे एक साल के लिए प्रत्येक कलाकार का ठेका निश्चित कर दे रहे हैं। पूरे वर्ष में चाहें एक कार्यक्रम हो या तीन सौ पैंसठ हो प्रत्येक का निश्चित एक वर्षीय ठेका वितरित कर दिया जाता है, और अवशेष धनराशि को दल का मुखिया अपनी आमदनी समझकर रख लेता है। ठेका भी कलाकारों के कला पर ही निर्भर करता है। मनचाहा नहीं। हाँ इतना जरूर है कि कलाकारों को प्रसन्न

एवं संतुष्ट रखने के लिए मूल्यांकन उनके कला के हिसाब से होता है। वर्तमान समय में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं उससे सम्बन्धित कलाओं के एक कार्यक्रम के प्रदर्शन का सट्टा (मूल्य) लगभग दस हजार रूपये हो गये हैं। इसके उपरान्त कलाकारों को उनके अनोखे एवं उम्दा प्रदर्शन के लिए कलाप्रेमी अलग से पुरस्कार प्रदान करते हैं। उस पुरस्कार में कहीं–कहीं सभी कलाकारों में बराबरी का हिस्सा लगता है तो, कहीं–कहीं जो कलाकार अपनी कला पर प्राप्त करते हैं, उसे दे दिया जाता है। यह सभी कलाकारों के संतुष्टि एवं दल के मुखिया के उदारीकरण पर निर्भर करता है। इस प्रकार यह स्पष्ट मालूम होता है कि यह वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित कलायें अब सस्ता एवं सहजता से परिपूर्ण नहीं है। जिस उद्देश्य से इस वाद्ययन्त्र को धार्मिक आस्था से मनोरंजन के क्षेत्र में लाया गया था वह सपना आज चकनाचूर सा होता प्रतीत हो रहा है। अब तो यह वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित कलायें वैभवशाली, सामन्ती,धनाढ्य एवं प्रभावशाली मनुष्यों के शौक एवं धनप्रदर्शन का एक अंग बन गया है, आर्थिक तौर पर लोगों के मनोरंजन का संसाधन नहीं। वर्तमान समय में नर्तक भी उपलब्ध नहीं हो पा रहे हैं। इसका मुख्य कारण अधूरी शिक्षा का विस्तार, मेहनत (कला प्रदर्शन) के बदले न्यून पारिश्रमिक जिससे मानसिक संतुष्टी का अभाव, कला के प्रति हेय दृष्टि एवं आज के आधुनिक युग के चकाचौध में अपने–आपको एवं कला को अलग–थलग महसूस करना माना जा रहा है। इसका मुख्य कारण शिक्षा के स्तर का बढ़ना, गरीबी का कम होना, मनोरंजन के आधुनिक संसाधनों का रोज–रोज विकास होना भी माना जा रहा है।

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र

## एक लोकवाद्य है तो, और कौन–कौन से है?

पहले ही बताया जा चुका है कि इस समाज की बुनियाद ही लोक कला, लोक साहित्य पर स्थिर है। जिस दिन लोक कलायें विलुप्त हो जायेंगी उस दिन समाज के अस्तित्व पर ग्रहण न लग जाय यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। अनेक लोक कलायें इस विश्व में थीं, और हैं। उन्ही में एक महत्वपूर्ण वाद्ययन्त्र हुडुका (हुरूका) भी है। इसके क्षेत्र के बारे में विस्तृत चर्चा हो चुकी है। हुरूका वाद्ययन्त्र के समकक्ष थोड़ा पहले एवं बाद के अनेक वाद्ययन्त्र है जिनका तुलनात्मक परिचय करा देना मुनासिब है। सर्वप्रथम 'मृदंग' आता है जिसे सोलहों कला के अवतार भगवान श्री कृष्ण भी वादन करते थे। यह दोनो हाथों से वादन करने का वाद्ययन्त्र है। इसे कमर की ऊँचाई पर ले जाकर आगे पेट पर रखकर वादन करते हैं। डुग्गी एवं नक्कारा (जिसे नगाड़ा) कहते है एक प्रसिद्ध लोक वाद्ययन्त्र है जिसे निश्चित आकार की पतली लकड़ी से नौटंकी या नृत्य पार्टियों में वादन किया जाता है। इसकी आवाज सचमुच आह्लादकर होती है। 'तासा' भी एक प्रकार का लोक वाद्ययन्त्र है। जिसे तीन फुट ऊँचाई पर रखकर दोनों हाथ से निश्चित आकार की पतली लकड़ी से बजाते हैं इसका आकार भगोनानुमा होता है। 'डफरा' एक ऐसा लोक वाद्ययन्त्र है जिसे चमार जाति के लोग अपना जातीय वाद्ययन्त्र कहते हैं। यह बारह सेन्टीमीटर के त्रिज्या में वृत्ताकार बने लकड़ी के मेखले पर पशुओं के शरीर के चर्म को सामने से समतल चढ़ाकर एवं पीछे से टाइट करके बनाया जाता है। इसे एक फीट की अंगुलीनुमा लकड़ी से बीच में ठोककर ताल सुर से बजाते हैं और ऊपर से बहुत पतली लकड़ी जो लगभग एक फुट की होती है, उससे ताल में ताल मिलाकर बजाते है। इस पर दो पुरूष नर्तक धोती–कुर्ता पहन कर एवं गले में गमछा लटकाकर नाचते हैं। 'सिंगा' एक प्रसिद्ध एवं ऊर्जाबर्द्धक वाद्ययन्त्र है। यह पीतल का चार से पाँच फीट लम्बा वक्र एवं घुमावदार नीचे का भाग पतला एवं ऊपर का क्रमशः चौड़ा होता है। इसके पतले भाग को मुँह में डालकर जोर लगाकर फूँक मारकर बजाते है। वनवास में

मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान राम से मिलने जाते समय कोल एवं भील यही सिंगा बजाकर युद्ध की चुनौती भरत को दिये थे। यह बल एवं जोश बर्द्धक वाद्ययन्त्र है। 'उपंग' भी एक हुडुका (हुरूका) से मिलता–जुलता वाद्ययन्त्र है, जिसे काँख में दबाकर एक हाथ से डोरी पकड़कर दूसरे हाथ से बजाते हैं। 'झाल' भी एक लोक वाद्ययन्त्र है। यह फूल धातु का केन्द्र में धसा, बीच का भाग उभरा एवं पुनः अग्रभाग झुका हुआ होता है। बजाते समय झन–झन की आवाज आती है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि हुडुका (हुरूका) एक सर्वोत्तम एवं अति प्राचीन, पवित्र, मनोरंजनदायक, कष्ट निवारक वाद्ययन्त्र है। इसके अतिरिक्त अनेकों वाद्ययन्त्र है जिनकी चर्चा समयानुसार की जायेगी।

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र

## उत्तर प्रदेश, उत्तरांचल एवं अन्य स्थानों में क्या समानता है?

जहाँ–जहाँ तक हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का क्षेत्र है, वहाँ–वहाँ तक इस वाद्ययन्त्र के बनावट में कोई भिन्नता नहीं है। सभी वाद्ययन्त्र लकड़ी के शंकुनुमा ढाँचे के मेखले पर बकरे या अन्य जानवर के आमाशय की पतली झिल्ली से ही बनाये गये हैं। हाँ वादन करने के ढंग एवं अदा में अन्तर देखने एवं सुनने को मिलता है। बहुधा गीतों एवं पहनावा में भी अन्तर आ जाता है। उत्तरांचल के हुडुका (हुरूका) वादक दूसरे अन्दाज में वादन करते हैं। नर्तन भी उनका अलग किस्म का होता है। गीत भी गढ़वाली, कुमायुँनी या हिन्दी के होते हैं। मध्य प्रदेश के हुडुका (हुरूका) वादक दूसरे तरह से बजाते गाते एवं पोशाक पहनते हैं। आदिवासी क्षेत्रों में विख्यात छत्तीसगढ़ के राजनांदगाँव, जगदलपुर एवं बस्तर के आदिवासी अलग अन्दाज का प्रयोग करते हैं। उनके गाने, नाचने की शैली व ढंग तथा वाद्ययन्त्र को बजाने का तरीका अन्य सबसे अलग होता हैं। उनके गीत भी आदिवासी भाषा के होते है। नेपाल की तो बात ही अलग है। वे हुडुका (हुरूका) का वादन लम्बे समय तक चढ़ाव–उतार लेकर करते है। मिश्रित भाषा नेपाली, हिन्दी, मैथिल, भोजपुरी आदि–आदि से मिश्रित बने गीतों का प्रयोग वे करते हैं। उनके नृत्य का तरीका अलग होता है नेपाली असम की प्रमुख लोकनृत्य 'बिहू' से मिलता–जुलता नृत्य करते हैं। जबकि पूर्वी उत्तर प्रदेश के एवं पश्चिमी बिहार के हुडुका (हुरूका) वादक इस वाद्ययन्त्र का वादन एक समान करते है। जिन कलाओं का प्रदर्शन पूर्वी उत्तर प्रदेश के कलाकार करते हैं उन्हीं का प्रयोग पश्चिमी बिहारी भी करते हैं। वादन का तौर–तरीका, सहयोगी वादन, संसाधन, पोशाकें सब समान होते हैं। जहाँ तक गीतों की बात है तो, एक तरह की गीत इन दोनों क्षेत्रों के लोग गाया करते है। इनकी गीतें शुद्ध रूप से भोजपुरी में होती हैं। भोजपुरी में भी शुद्ध एवं ठेठ भोजपुरी के शब्दों का अधिकाधिक प्रयोग रहता है। गीत अलग–अलग होते हैं जो समयानुकूल होते हैं। जगजाहिर है कि भोजपुरी सबसे मधुर, लचकदार, सहज, ग्राहय, मनोरंजक एवं सरस वोली है, अतः इसके गीत भी उसी प्रकार के होते हैं। इसलिये हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित कलायें पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बिहार में संरक्षित है एवं, उनका अस्तित्व बचा हुआ है।

# कौन–कौन से लोग हुडुका वादन किये हैं किसे करना चाहिए?

पूर्व में इस वाद्ययन्त्र का वादन कौतूहल वश अनेकों लोग विभिन्न आयु के लोग कर चुके हैं। पहले तो यह एक जाति विशेष भड़भुजा (गोंड़ जिन्हें अब गोंड) तक ही सीमित था परन्तु, बाद में यह बन्धन टूट गया। ठीक वहीं स्थिति आज भी है। उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल के विभिन्न क्षेत्रों का भ्रमण करने पर इस वाद्ययन्त्र के प्रति जो खाका मस्तिष्क पटल पर उभरा उसमें यही ज्ञात हुआ कि इस वाद्ययन्त्र के वादक पर उम्र का कोई प्रतिबन्ध नहीं है। साथ ही साथ लिंग का भी प्रतिबन्ध अब टूट चुका है। छोटे–छोटे बालक, किशोर, युवा, जवान, बृद्ध, बालिकाएं, युवतियाँ, महिलायें कोई भी इसका वादन कर सकता है एवं, अन्धाधुन्ध कर रहे है। स्व मनोरंजन एवं पर सुख का स्पष्ट उदाहरण यह वाद्ययन्त्र है। बहुत लम्बे अभ्यास एवं उच्च शिक्षा की इसमें कोई आवश्यकता नहीं है। किसी संगीत विद्यालय में प्रवेश लेने की जरूरत नहीं है। किसी भी दक्ष बादक के सानिध्य में रहकर, उसकी खुशामद करके, उससे वादन की कला में महारत हासिल किया जा सकता है। बालक एवं किशोर यदि वादन कला सीखना चाहें तो सोना में सुहागा का काम होगा। प्रौढ़ यदि चार माह में निपुण होंगे तो बालक दो माह में। वैसे प्रतिभा भी प्रकृति प्रदत्त होती है। उसे प्रदर्शित करने का माहौल चाहिए। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के वादन में वर्तमान परिवेश में जाति–धर्म आयु एवं समय की बाध्यता नहीं है।

# उत्तर प्रदेश/उत्तरांचल के हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का तुलनात्मक अध्ययन

पहले ही बताया जा चुका है कि साज–सज्जा दोनों प्रदेशों का भले ही एक जैसा है परन्तु वादन का तौर–तरीका, सम्बन्धित कलायें, गीत आदि अलग–अलग हैं। उत्तरांचल के लोग अलग अदाओं का प्रयोग करते है जबकि, उत्तर प्रदेश के अलग। उत्तर प्रदेश वासी सरल एवं सरस ढंग अपनाते हैं। भाषा का प्रभाव भी इस वाद्ययन्त्र पर



बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

पड़ता है। उत्तरांचल की भाषा में मासूमियत कम मिलती है जबकि, उत्तर प्रदेश उसमें भी उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग जहाँ पर हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का भरपूर क्षेत्र है, की भाषा लाजवाब है। यहाँ की भाषा के गीतों को सुनकर पत्थर भी प्रभावित हो जाता है। वैसे यह लोककला दोनों ही क्षेत्रों में अपना प्रभाव बनाई है, प्रभावशाली है और प्रभाव छोड़ी है। चूँकि उत्तरांचल उत्तर प्रदेश का ही छोटा भाई है। खून एवं रिश्ता का प्रभाव तो समय आने पर दृष्टिगोचर होने ही लगता है। बहुत अन्तर होते हुए भी समानता के लक्षण मिलते हैं। समानता और भिन्नता तो दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। तुलनात्मक अध्ययन एक लम्बे तर्क एवं आख्या का विषय है। जब लोक जीवन एक समान होगा तो लोक भाषाएं भी समान होंगी, और जब लोक भाषायें समान होगीं तो लोक कला का समान होना स्वभाविक है। अतः उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र भिन्न होते हुए भी समान है। जिन दो प्रदेशों को गंगा जैसी पावन नदी पवित्र करती है, वहाँ की लोककलाएं एवं लोकवाद्यों में भिन्नता कैसे हो सकती है। लोक कला हमारी धरोहर है तो, लोक वाद्ययन्त्र हमारी पूँजी है। हमें इनके संरक्षण में वास्तविक संरक्षक की भूमिका अदा करना चाहिए। प्रदेश बँटने से क्या होगा ?दिल एवं सभ्यता नहीं बँटना चाहिए। अतः हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र हमारी पहचान है।

## उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का सामाजिक स्तर

साधारण किन्तु अति प्राचीन होने के कारण इस वाद्ययन्त्र का सामाजिक स्तर उच्चकोटि का है। इस वाद्ययन्त्र का समाज पर इतना एहसान है कि, इसकी भरपाई असम्भव है। उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल की सांस्कृतिक धरोहर हुडुका (हुरूका) भी कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होना चाहिए। सामाजिक स्तर को सुधारने के लिये क्या-क्या नहीं किया है हुडुका (हुरूका) ने। जैसे एक पिता अपने अबोध सन्तान को संवारने एवं सजाने का काम करता है, उससे अधिक कार्य किया है इस वाद्ययन्त्र ने। असामाजिक से सामाजिक बनाना, धार्मिक आस्था को बल देना, भरपूर मनोरंजन एवं आनन्द की अनुभूति कराना, मितव्ययी बनाना, 'एक रहो नेक रहो' का पाठ पढ़ाना एवं अपनी संम्प्रभुता के लिए रत रहने तक की सीख दिया है इस वाद्ययन्त्र ने। मानव जब असामाजिक रहता है तो, उसके ऊपर पाशविकता का पहरा रहता है। भगवान शिव जी द्वारा हुडुका (हुरूका) की उत्पत्ति तो एक बहाना था। इसी माध्यम से, समाज को नई दिशा मिलने वाली थी, जो वास्तव में सफलीभूत हुई। हुडुका (हुरूका) का सामाजिक स्तर व्याख्या के वश का विषय नहीं है। इस वाद्ययन्त्र में परिष्कृत समाज दर्पण की तरह झलक मारता है। हम सामाजिक मानव उसे कहते हैं जो समाज के उत्थान हेतु अनवरत लगनशील रहता है। यह वाद्ययन्त्र समाज की मेरूदण्ड की भाँति है। अतः इसके सामाजिक स्तर का ग्राफ सर्वोपरि है। संगठित समाज एवं दृढ़ संकल्पित मानवता के लिए इस वाद्ययन्त्र का

सामाजिक स्तर विवेचना के परे है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र समाज को वह सब कुछ दिया है जो देना चाहिए परन्तु समाज ने हुरूका को कुछ नहीं दिया। यदि समाज हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को कुछ देता तो आज यह वाद्ययन्त्र सम्पूर्ण हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र क्षेत्र में घर–घर में लटकता हुआ एवं प्रणम्य बन जाता। इस विषय पर हमें गहराई से सोचना चाहिए।

## हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का प्रारम्भ कैसे होता है?

किसी भी अवसर पर जब हुरूका वादन के लिए कहीं जाता है तो सर्वप्रथम बस्ती से बाहर ही लाल कपड़े में बँधे इस वाद्ययन्त्र को दाहिने हाथ की तर्जनी अंगुली से तीन बार ठोककर बजा देता है। यह बात दल के अन्य व्यक्ति भी कभी–कभी जानते हुए भी नहीं देख पाते हैं। इसका एकमात्र उदेश्य यह होता है कि, बादक यह विनम्र निवेदन करके अर्जी लगाता है कि हे इस क्षेत्र में या क्षेत्र के बाहर निवास करने वाले देवगण! मैं आप लोगो की शरण में अपनी कला का प्रदर्शन करने आया हूँ। मै आपलोगों के समक्ष सामर्थ्यहीन कलाकार हूँ। हमारे पूर्वज–पितर यह करते आये हैं अत: मै भी आप लोगों को प्रणाम करता हूँ। आप सबकी जिम्मेवारी बनती है कि आप इस वाद्ययन्त्र की प्रतिष्ठा पर आँच नहीं आने देंगे। वह बादक यह भी सतर्क करता है कि, मैं जो भी करूंगा वह भला हो या बुरा, प्रिय हो या अप्रिय उसका प्रदर्शन समाज सुधार, समाजोत्थान एवं मानवहित को ध्यान में रखकर भरपूर मनोरंजन के लिए ही करूँगा। यदि कहीं त्रुटि हो जाय तो जो भी दण्ड मुझे दिया जायेगा उसे मैं सहर्ष स्वीकार करूँगा। ये सारे शपथनुमा कल्पना मन ही मन करके दोनों हाथ से दोनों कान पकड़कर तीन बार उठता–बैठता है, तदोपरान्त धरती पर सांष्टांग प्रणाम करता है। मै इस समाज से सवाल पूछना चाहता हूँ कि दुनिया के किस वाद्ययन्त्र के वादक में इतना समर्पण एवं आस्था मिल सकता है?वादक जब सभी कलाकारों सहित वादन की क्रिया प्रारम्भ करता हैं तो विभिन्न भाँति से हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को प्रणाम करके धरती को स्पर्श करते हैं। नर्तक जो स्त्री वेश में होते हैं, एक लाजवन्ती स्त्री की भाँति समस्त शरीर चेहरे को साड़ी से ढ़ककर कमर के यहाँ से झुककर धरती को स्पर्श, मन–मन स्मरण एवं प्रणाम करते हैं। इस काल में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का वादक वादन क्रिया धीरे–धीरे प्रारम्भ रखता है। जब धरती पूजन, देव स्मरण, शान्त स्तुति समाप्त हो जाती है तो सभी कलाकार अपने से निपुण एवं वरिष्ठ कलाकारों का चरण छूकर प्रणाम करते हैं और आशीष की कामना करते हैं। दुनिया के किस वाद्ययन्त्र एवं कला में इस प्रकार का समर्पण तथा अनुशासन देखने को नहीं मिलता है। प्रसन्न मुद्रा में सभी कलाकार एक दूसरे से मिलते–जुलते है। एक हर्षकार माहौल स्थापित हो जाता है। न तो किसी से बैर न किसी के प्रति आक्रोश। समस्त कलाकार एक स्वच्छ मानसिकता लेकर कला का प्रदर्शन करने पर उतारू हो जाते हैं। कहा गया है कि ''होनहार वीरवान के होत चिकने पात'' लगन से प्रारम्भ होता है और अन्त भी हर्षोउल्लास एवं उमंग से परिपूर्ण होता है।

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के साथ संगत करने वाले गीत

बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल  का हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र बनावट के ध्येय से एक समान है। यह चर्चा पूर्व में की जा चुकी है कि, भाषा में, रहन–सहन में अन्तर होने के कारण ढंग, पोशाक, कला, प्रदर्शन में भिन्नता मिलती है। कहा भी गया है कि ''कोस–कोस पर बदले पानी, पाँच कोस पर बानी''। थोड़ी सी दूरी में अन्तराल होने पर भाषा, रहन–सहन एव व्यवहार में परिवर्तन की छाया पड़ जाती है। उत्तरांचल तो उत्तर प्रदेश का ही छोटा भाई है, परन्तु प्राकृतिक बनावट जलवायु के स्तर पर यदि देखा जाय तो यह उत्तर प्रदेश से काफी भिन्न है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के दृष्टिकोण से तो उत्तरांचल एवं उत्तर प्रदेश में काफी भिन्नता है। उसमें भी पूर्वी उत्तर प्रदेश जो लोक साहित्य, लोककला, लोकगीत, लोकनृत्य लोकवाद्य में अनेकता में एकता समेटे हुए अत्यन्त कर्ण–प्रिय, दृश्य प्रिय एवं लोकप्रिय है, जिसकी चर्चा एवं बखान विदेशों में मुक्तकन्ठ से होती है वह तो उत्तर प्रदेश ही नहीं पूरे विश्व में अमिट छाप छोड़ता है। सच पूछा जाय एवं पैनी नजर से देखा जाय जो पूर्वी उत्तर प्रदेश ही हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का हृदय स्पंदन है। यहाँ से जो सम्मान इस वाद्ययन्त्र को मिला है, या इस वाद्ययन्त्र ने पूर्वी उत्तर प्रदेश को सम्मान दिया है, वह अवर्णनीय है। पूरा विश्व पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोक कलाओं का अनुकरण करता है। हुडुका (हुरूका) की लोकप्रियता का प्रमाण–पत्र पूर्वी उत्तर प्रदेश में मिलता है। इस प्रदेश का वह कौन सा मन्दिर नहीं है जिसमे, आरती के समय इस वाद्ययन्त्र का वादन आज भी नहीं किया

जाता है। यदि मनचाहा एवं भरपूर आनन्द या, यों कहें कि परमानन्द की प्राप्ति इस वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित गीतों, कलाओं से मिलता है। जो वाद्ययन्त्र इतना लोकप्रिय है, उसके गीत भी निश्चित तौर पर इसके चार चाँद लगाने में अहं भूमिका का निर्वहन किये होंगे। आइये देखें! की पूर्वी उत्तर प्रदेश की मुख्य मधुर भाषा, बोली जिसमे रचे गये लोकगीत समाज को आइना दिखाने का काम करते हैं, हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के साथ कब एवं किस रूप में संगत करके इस वाद्ययन्त्र को लोकप्रिय बनाते हैं। जब इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित कलाओं का प्रदर्शन करना होता है तो, दुनिया के अन्य संगीत, गीत, कलाओं में जैसे स्तुति, स्मरण, सुमिरन प्रस्तुत किया जाता है वैसे ही, इसकी भी प्रस्तुति स्तुति या सुमिरन से ही प्रारम्भ करते हैं। अन्तर इतना ही होता है कि इस वाद्ययन्त्र के सुमिरन में वादन एवं गायन में एक अलग तौर–तरीका अपनाया जाता है। बड़े मुँह वाले लम्बे बोतल में मिट्टी का तेल भरकर एक मोटी बत्ती को जला कर बोतल के मुँह पर आवश्यकतानुसार मिट्टी रखकर एक पूजन सामग्री बनाते हैं, जिसे 'लुकार' कहते है। समस्त कलाकार एक वृत्ताकार में बैठकर लुकार को जलाकर बीच में रख देते हैं। नर्तक वृत्ताकार के बाहर नर्तन का कार्य प्रारम्भ करते हैं। गीतों का गायन आरम्भ हो जाता है। यथा,

(1) तोहरी सरनिया मनाई शिव बाबा हो,
मनाई शिव बाबा हो, मनाई शिव बाबा हो,
शिव बाबा हो सुमिरन में होखीं ना सहाय।........4....

(2) तोहरी सरनिया मनाई डिहवा बाबा हो,
मनाई डिहवा बाबा हो, मनाई डिहवा बाबा हो,
डिहवा बाबा हो, सुमिरन में होख ना सहाय.......4....

(3) तोहरी सरनिया मनाई काली माई हो,
मनाई काली माई हो, मनाई काली माई हो,
काली माई हो सुमिरन में होख ना सहाय।.......4......

गीत का प्रारम्भ एक मुख्य गायक करता है। तदोपरान्त सभी कलाकार पीछे से कोरस (टेरी) भरते हुए गाते हैं एवं मजीरा वाले दोनों हाथों से मजीरा बजाते है। गायक एवं वादक लुकार के चारो तरफ कभी एक साथ बैठकर तो कभी एक साथ खड़े होकर झूम–झूमकर गाने–बजाने का कार्य सम्पादित करते हैं। नर्तक समूह में अपने नर्तन कला का प्रदर्शन सलीके से करते है। हरबोला जिन्हे बोलिहा या जोकर कहा जाता है, सहायक सामग्री बाँस के अग्रभाग को फाड़–फाड़कर बारीकी से बनाये गये मुठिया युक्त भरंगा या थेथरा को वृत्ताकार बैठे कलाकारों के ऊपर ताल की गति

तीव्र होने पर आपस में कई बार लड़ा–लड़ाकर अपनी कलाओं का प्रदर्शन करते हैं। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के वादक एवं सम्बन्धित कलाकार अपनी स्तुति में भगवान शिव को प्राथमिकता देकर प्रथम वरीयता पर स्मरण या सुमिरन करते हैं एवं बाद में ग्राम के डीहबाबा, माता काली, गुरू, माता–पिता एवं धरती आकाश की स्तुति करते हैं। वे एक ही गीत में समस्त देवताओं–देवियों एवं चर–अचर की स्तुति कर लेते है यथा,

'इहवाँ के बाबा टुइयाँ–भुइयाँ,
परतानीं पइयाँ–पइयाँ हो,'............3

निरक्षर एवं साक्षर होने के उपरान्त भी इस वाद्ययन्त्र के कलाकार स्तुति (सुमिरन) की मजबूत बुनियाद स्थापित करके अपनी कलाओं का आयाम प्रदर्शित करना चाहते हैं। स्तुति के उपरान्त इस हाड़–मांस के नश्वर शरीर की उपयोगिता एवं यह क्षणभंगुर है, इसका आदर्श दिखाने का क्रम जारी करते है। वे कहते हैं कि इस मायारूपी भवसागर को पार करने के लिए सत्कर्म एवं ईश्वर भजन ही एकमात्र नौका है। वे सजग करते हैं कि प्राप्त आयु मे से कुछ भाग प्रतिदिन निकालकर ईश्वर के भजन में जरूर लगाना चाहिए। भजन वह संजीवनी है जो मानव को दानव होने से बचाती है। वादन एव गायन के दूसरे पादान पर वे भजन प्रारम्भ करते हैं। भजन गाते हुए कहते हैं–

''अरजी सुनि लीं हे बनवारी''.........3
जलधि बीच, गजराज पुकरले,
आके दिहलीं उबारी,
ग्राह के चाह ना पूरा भइले,
छने में दिहनीं मारी.....
भरल सभा में बिलखत रहली,
पांचाली अस बेचारी,
खींचत चीर दु:शासन हारल,
एतना बढ़ा दिहनीं सारी........3

ये तो सगुण ब्रह्म धारा के उपासकों के लिये गायन एवं वादन करते हैं परन्तु निर्गुण ब्रह्म धारा के अनुयायियों हेतु भी वे भजन करते हैं, यथा,

रे मन मुरूख चेत, चेतऽ,

नीमन करम कर निशदिन तुँ,

दोसरा के गला ना रेतऽ........3

अध्यात्म की चरम सीमा अपने भजनों के माध्यम से इस यन्त्र के वादक दुनिया को दिखलाते हैं। इस वाद्ययन्त्र के कलाकार जब भाव–भंगिमा के साथ भजन प्रस्तुत करते है तो, परिलक्षित होता है कि साक्षात् धर्म एवं सुकर्म सामने उपस्थित हो गया है। परम्पराओं का निर्वहन करते हुए यथा गीत, तथा वादन, तथा भाव का प्रदर्शन भजनों को भावमय एवं भक्तिमय बना देते हैं। कठोर से कठोर हृदय का व्यक्ति भी थोड़े से समय के लिए भाऊक हो जाता है और मायावी संसार को मिथ्या समझने लगता है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के कलाकारों को यदि समाज सुधारक की संज्ञा दी जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। यह क्रम क्रमश : घन्टे भर चलता है। स्तुति एवं सुमिरन के पश्चात जब भजन का कार्यक्रम समाप्त हो जाता है तो, तत्समय तक कलाकार एवं श्रोता भारीपन महसूस करते रहते हैं। करें क्यों भी नहीं ?जब आदमी चिन्तन में रत हो जाता है तो भौतिक दुनिया गौड़ हो जाती है एवं आध्यात्मिक संसार आँखो के सामने नृत्य करने लगता है। अत : हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के कलाकार माहौल को श्रोता योग्य एवं हल्का बनाने के लिए बीच में वे कुछ ऐसी कारगुजारी कर जाते है जिससे इस कला की दिशा एवं दशा बदलने लगती है। मुख्य वादक के मनोबल को बढ़ाने के लिए 'बोलिहा' या हरबोला या जोकर एक लोकोक्ति का बार–बार उच्चारण करके नर्तन करते हैं कि

'जिय हो मृदंगीं लाल'

दहिने छाती, बाँये गाल'

इस तुकारात्मक लोकोक्ति को कहकर एक या दो बार सजग करने हेतु मुख्य वादक के सिर पर भरंगा या थेथरा से दो–चार चोट हल्का कर देते है, ताकि वे सुस्त न पड़ें। वैसे वादक गण भी कम चतुर नहीं होते हैं। बोलिहा या हरबोला या जोकर हास्यरस के सबल प्रदर्शन के लिए बादकों के सिर पर अनवरत हल्का चोट करते रहते हैं अत : सतर्कता पूर्वक वादकगण सिर पर मोटी पगड़ी बाँधकर सुरक्षात्मक तरीका अख्तियार किये रहते हैं। नर्तकों को फुर्तीला एवं सरस करने के लिए हरबोला या जोकर ऐसी–ऐसी कारगुजारी का नग्न प्रदर्शन करते हैं जैसे कि, कोई मनबढ़ युवक किसी बेहया औरत से करता है। बीच में वादन कला एवं नर्तन कला को विश्राम देकर दूसरी कलाओं से व्यंग का प्रदर्शन करके वातावरण को हँसने योग्य एवं हल्का बनाते रहते हैं।

हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के कलाकारों में देशभक्ति की भावना कूट–कूटकर भरी होती है। उनकी यह

मानसिकता होती है कि, देश से हम हैं और हमसे देश है, अतः इसकी सुरक्षा एवं संरक्षा में कहीं से कमी नहीं होना चाहिए। वे अपने गीतों में देशभक्ति एवं देश के प्रति समर्पण का प्रदर्शन करते हुए मुल्क की सलामती की दुआयें सदा मांगते है। यथा,

देशवा के तूँही रखवार मोरे भइया हो,...........3
दुशुमन करता रोजो वार मोरे भइया हो..
जाति–धरम के भरम बिसरावऽ,
करतारी धरती पुकार मोरे भइया हो।............3

इस गीत से स्पष्ट हो रहा कि हुडुका (हुरूका) के कलाकार अपने मुल्क के दुश्मनों से कभी भी खार खा सकते हैं। दुनिया का कोई भी मुल्क यदि भारत पर आँख दिखायेगा तो उसकी आँख निकालने का माद्दा इन कलाकारों के रग–रग में भरा पड़ा है। यही नहीं वे अपने गीतों एवं वाद्यों में ललकार भरकर गाते हैं कि–

''गाथा गावतानीं अपना हिन्दुस्तान के,
भारत देश महान के नाऽ,.......3....
हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, इसाई,......2....
इहवाँ सभे ह भाई–भाई,......2....
केहू सहेला ना सोझा अपमान के......3....

लोककला के वाद्ययन्त्रों के साथ लोककला के गीत, नृत्य, साहित्य, नाटक ही सटीक बैठेंगे। आज जहाँ सम्पूर्ण भारत जातिबाद, क्षेत्रवाद, वर्चस्ववाद एवं अहंवाद की लपटों में झुलस रहा है, धनी रोज धनी हो रहे हैं और निर्धन रोज निर्धन उस दशा में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित कलाकार समता मूलक समाज की स्थापना, देश प्रेम, अनुशासन, एकता, अखण्डता, विभिन्न प्रकार के विकास, जातीयता का जहर समाप्त करने की कला, गायन एवं वादन का कार्य करता है यह शिक्षित एवं विकसित समाज के लोगों को सीख लेना चाहिए। बड़े–बड़े पढ़े–लिखे लोग एवं देशभक्त हितैषी एकतरफ जहाँ देश को लूटकर खोखला बना देते हैं वहीं, इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित कलाकार विकासोन्मुख होने का राग अलाप रहे हैं यह अनुकरणीय प्रकरण है। समाज को पारदर्शी बनाने में अब तो यही कहना पड़ेगा कि शिक्षित एवं तकनीकि रूप से मर्मज्ञ लोगों से लाख गुना अच्छे तो ये निरक्षर एवं साक्षर लोककला के लोग हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के वादक एवं सम्बन्धित कलाकार ही हैं।

यदि निर्धन एवं आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों का सबसे हितैषी कोई वाद्ययन्त्र है तो वह हुडुका (हुरूका) ही है वैवाहिक कार्यक्रमों में मंगल के जितने कार्यक्रम होते हैं, यह वाद्ययन्त्र सकुशल सम्पादित करा देता है। किसी अन्य प्रकार के वाद्ययन्त्र एवं मनोरंजन की विधा की आवश्यकता नहीं पड़ती है। सगाई, हल्दी, मटकोड़, वरपरछन, द्वाराचार आदि सभी रस्मों में यह हर्ष पूर्ण वातावरण में नि:शुल्क या कम खर्च पर सहजता पूर्वक कार्यक्रमों को सफल बनाता है यह वाद्ययन्त्र। द्वाराचार के उपरान्त जब बारात उचित स्थान पर बैठ जाती है तो, रात्रि मनोरंजन में सर्वप्रथम दूल्हे के स्वागत एवं सम्मान में सेहरा अपनी शैली एवं विधा में गायन करता है। यथा,

'आजु दुलहा घरे ब्याह हो,
हाथे लाल मेहदिया.......3...
केई मेहदिया रगरि ले आवे,
रगरि ले आवे हो, रगरि ले आवे,
केकर ह्थेलिया लाल हो,
हाथे लाल मेहदिया......3...

उपरोक्त गीत कहरवा लय पर आधारित है। जिसे घूम–घूमकर, नाच–कूदकर, दूल्हे एवं उसके सम्बन्धियों को सम्बोधित करके हुडुका (हुरूका) के वादक एवं समस्त कलाकार गाते है तो, मंगल एवं वैवाहिक माहौल का रूप खड़ा हो जाता है। कभी कमर लचकाकर, कभी कंधे पर से झुककर कभी शरीर के उपरी हिस्से में गति करके कलाकार गायन एवं वादन करते है। मुख्य वादक हुडुका (हुरूका) यन्त्र को ताल एवं सुर में बजाकर नर्तकों के पीछे–पीछे नचाते हुए एवं खदेड़ते हुए अपनी कलाओं का प्रदर्शन करते हैं। कई नर्तक कई दिशाओं में मस्त होकर नर्तन करते एवं अपनी उम्दा कला का प्रदर्शन करते हैं, बीच–बीच में विश्राम करने के लिए कलाकार बीड़ी, सूर्ती एवं जब–तब गाँजा का प्रयोग भी करते हैं। निद्रा देवी का आँखो पर निवास न हो, इसके लिए बहाना स्वरूप इन नशाओं का प्रयोग करते हैं। हालांकि ऐसा नहीं करना चाहिए परन्तु, आदत तो आदत होती है जो जीवन के साथ ही समाप्त होती है। कला के प्रदर्शन, नर्तन, वादन, गायन में कठिन परिश्रम करने के बाद भी इन कलाकारों को थकान का एहसास मात्र नहीं होता है।

अब प्रारम्भ होता है सामाजिक मार्गदर्शक, श्रृंगार के संयोग एवं वियोग पक्ष के गीत, नशा उन्मूलन, विकास एवं समाज विरोधी तत्वों के पतन करने वाले गीतों का समय। वे बाल विवाह एवं बेमेल विवाह की गीतों के माध्यम से आलोचना करते हुए गाते हैं,

'गोरिया नान्हे कइली कजरा,
तोर भइया रिसिआई......4....
आमवा के मरले महुइया भहराइ हो,
महुइया भहराइ हो, महुइया भहराई हो,
गोरिया डहरी के लोगवा
देखे त लरिआई............4....

मीठी एव सरस भोजपुरी के ठेठ भाषाओं का प्रयोग करके वे समाज की नवयुवतियों को सोचने के लिए मजबूर करते हैं कि इस समाज में छोटी उम्र की किसी भी जाति की लड़की को ऐसा कोई श्रृंगार नहीं करना चाहिए जिससे समाज बिरोधी तत्व अपनी हरकतों को दिखा सकें। परिवार की प्रतिष्ठा होती हैं, घर की बिटिया। समाज यदि उन पर कीचड़ उछालता है तो पूरा परिवार एवं खानदान बदनाम होता है। अतः सतर्क करते हुए भाई अपने बहन पर नाराज होता है कि खानदान की प्रतिष्ठा बचाओं। देखना इसमें दाग न लगने पावे। इस प्रकार यह वाद्ययन्त्र मनोरंजन का साधन ही नहीं अपितु युवकों/युवतियों एवं समाज को कदम–कदम पर सतर्क करने का काम भी करता है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के गीतों में श्रृंगार रस के दोनों पक्षों का सजीव गायन होता है। रसिक लोग इन गीतों को सुनकर भरपूर आनन्द उठाते हैं। श्रृंगार जो मानव बनने का एक अंग है उसे भी इस वाद्ययन्त्र ने भरपूर सहयोग देने का काम किया है। मानव एवं पशु में यहीं तो अन्तर है। मानव सुन्दर एवं आकर्षक रहने के लिए यथा स्थान, यथा समय एवं यथा विचार, श्रृंगार करता है जबकि, पशु नहीं। पशु को आकर्षक मानव ही बनाता है। श्रृंगार के दो पक्ष संयोग एवं वियोग होते हैं। इन गीतों पर इस वाद्ययन्त्र का सहयोगी वादनों के साथ आवश्यक सामग्री सहित कला का प्रदर्शन करते हैं तो एक रूप खड़ा हो जाता है। नई नवेली अल्हड़ जवानी की नारी हो, दुल्हन हो या नवयुवक या नौजवान पुरूष हो इनमे प्रायः श्रृंगार के संयोग पक्ष की प्रतियोगिता होती रहती है। कौन नहीं चाहता है कि हमें दूसरे लोग सुन्दर एवं आकर्षक कहें। वर्तमान परिवेश के असभ्य एवं आदिवासी भी अब परिवर्तित नजर आ रहे है। तब में और अब में उनके अन्दर बहुत बड़ा फर्क दिखाई देता है। वर्तमान समय में श्रृंगार के कृत्रिम संसाधन अधिकतम आविष्कृत हो चुके हैं। श्रृंगार प्रसाधनों के प्रयोग से मानव का मौलिक स्वरूप ही बदल जा रहा है। लोग बदले–बदले सा नजर आने लगते हैं। यह विषय बड़ा ही विस्तृत है। हमें उधर न जाकर मूलबिन्दु को ही देखना है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के साथ श्रृंगार का संयोग पक्ष कितना मनो विनोद पूर्ण वातावरण बना देता है इस गीत के माध्यम से देखें। यथा–

'बाड़ा रंगदार, कजरा लगवले बाड़ू
कजरा हो लगवले बाड़ू, कजरा हो लगवले बाड़ू,
बाड़ा रंगदार कजरा लगवले बाड़ू........4....
लाले–लाले सारी–साया,
कुरूती चमकेले नाया,....केशिया के झार......4.......
मांगे सेनुर, काने बाली,
ओठवा पर चटक लाली,
कंगना कटार, कजरा लगवले बाड़ू....

उरोक्त गीत बिना कुछ कहे स्पष्ट कर रहा है कि श्रृंगार क्या होता है?इस वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित गीत समाज को वहाँ तक छुवे है जहाँ कोई भी वाद्ययन्त्र नहीं पहुँच पाया है। श्रृंगार के संयोग पक्ष का इतना प्रभावशाली वर्णन कहाँ मिल सकता है? एक नवयौवना महिला के नख–शिख वर्णन का विवेचन उपरोक्त गीत में आइना की तरह सामने दिखाई पड़ रहा है। निरक्षर–साक्षर होते हुए भी इस वाद्ययन्त्र के कलाकार अपने गीतों में समास, अलंकार, रस, छन्द सबका यथोचित उपयोग करके यह प्रदर्शित करते है कि प्रतिभा किसी की बपौती नहीं है। प्रतिभाशाली एव कला का प्रदर्शक कोई भी हो सकता है। उपरोक्त गीत पर जब वाद्ययन्त्र के वादक गीत से सटाकर हुडुका (हुरूका) को बजाते हैं तो निर्जीवों के शरीर में भी हलचल होने लगता है। कभी बैठकर, कभी घूम–घूमकर, कभी नर्तकों को दौड़ाकर उनके पीछे–पीछे वाद्ययन्त्र को बजाते हुए खदेड़ते हुए इतना अच्छा लगात है एवं इतना आनन्द आता है कि सीमा नहीं होती है। अल्हड़ जवानी की नारी अपना श्रृंगार करके अपने जीवन साथी पति को दिखाते हुए जब यह गीत गाती है कि,

लाले–लाले रंगवा में चुनरी रंगवलीं
ए हो बलमुवा मोरे हो,
चुनरी भइलि चटकार, एहो बलमुवा मोरे हो........4....
चुनरी पहिरि हम चललीं बजरिया
हम चललीं बजरियाऽ
एहो बलमुवा मोरे हो,.........3.....
शान मारे लोगवा हजार, एहो बलमुवा मोरे हो.....

एक पत्नी अपने पति के प्रति कितना आस्थावान है कि वह अपने श्रृंगार को किसी अन्य के लिए नहीं अपितु पति के लिए ही करती है। ''मेरा पति मेरा देवता है'' या 'तुही मेरी मंजिल, तूहीं मेरी पूजा, तूही देवता हो, तूहीं देवता' वाली गीतों को वह चरितार्थ करती है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित यह गीत श्रृंगार रस के संयोग पक्ष का जीता–जागता उदाहरण है। वादक गण इन गीतों पर आत्मविभोर होकर वादन करते हैं, गायक सरस एवं सलिल बनकर गायन करते है एवं नर्तक वह रूप धारण कर लेते है, जो आकर्षक बनने के लिए एक नई–नवेली नारी अपने पति को देखकर करती है। हरबोले (बोलिहा) या जोकर इन गीतों पर नर्तकों से पर्याप्त छेड़–छाड़ करके गीत–संगीत को अत्यन्त रूचिकर एवं ऐतिहासिक बना देते हैं। नर्तक जो पुरूष होते हुए भी स्त्री वेश में होते हैं वे पत्नी बन जाते हैं एवं चिथड़ा पहने, मुँह पर चूना, कालिख एवं सिन्दूर के असंख्य टीका किये हुए, हाथ में बकुड़ी (कुबरी) लिये हुए हरबोले या जोकर उनके पति बन जाते है। एक दूसरे वे सारी अदायें प्रस्तुत करते है जैसा कि गीतों के शब्द कहते हैं। भावगीत की भाँति यथा स्थान किस प्रकार का प्रदर्शन करते है यह देखने योग्य होता है। दर्शक जो वृत्ताकार आकृति में बैठे होते हैं, उनमें मनोविनोदी दर्शकों को दिखा–दिखाकर, छोटे–छोटे बच्चों को गोद में जबर्दस्ती उठाकर भरपूर हास्य रस का प्रदर्शन भी होता है। मुख्य बादक को केन्द्र बिन्दु बनाकर उसे ही कभी–कभी पति एवं नर्तकों में से सुन्दरतम नर्तक को क्षण मात्र के लिए स्त्री बना देते हैं। यह वाद्ययन्त्र उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में श्रृंगार रस के वियोग पक्ष को एक नया आयाम देता है। जितना संयोग पक्ष प्रभावशाली नहीं होता हैं, उससे अधिक वियोग पक्ष दर्शनीय एवं श्रवणीय होता है। वियोग पक्ष को श्रृंगार से अधिक मार्मिक होने का प्रमाण–पत्र दिया गया। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र ने अपना प्रभाव हर जगह जमाने का प्रयास किया है और उसे सफलता भी मिली है। इस वाद्ययन्त्र का वर्तमान विकसित ही नहीं विकास की चरमबिन्दु को स्पर्श कर रहा है। हालांकि आधुनिकता ने इसके अस्तित्व पर कुठाराघात किया है, जो स्थायी नहीं रह पायेगा। पहले बाल विवाह को धार्मिक यज्ञ की संज्ञा दी गयी थी कन्या उसी को कहते है जो लड़की रजस्वला न हो। उस स्थिति में कन्यादान करने पर 100% पुण्य का भागी कन्यादान करने वाला होता है, ऐसा वेदों में भी वर्णित है। अत: कन्या रहते ही लड़की का विवाह पिता बाल विवाह के रूप में करते थे। धीरे–धीरे जब वह कन्या नवयुवती हो जाती थी तो उसका गवना माता–पिता शौक से करके उसे ससुराल भेंजते थे। विवाह एवं गवना के बीच में एक, तीन, पाँच, सात, नौ, ग्यारह वर्ष का अन्तर होता था। विवाह बाल समय में होता था परन्तु गवना यौवनावस्था पाने के बाद होता था। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के गीतों में इसका सांगो–पांगो वर्णन मिलता है। एक नवयुवती का विवाह बाल्यावस्था में हुआ और गवना नौ वर्ष बाद यौवनावस्था के आने पर हुआ। पति रोजगार की तलाश में एवं पारिवारिक जिम्मेवारियों के निर्वहन हेतु कुछ कमाने के लिए घर एवं नयी नवेली दुल्हन को अकेला घर में छोड़कर जब सुदूर की यात्रा पर चलता है तो जो स्त्री कहती है उसे इस वाद्ययन्त्र के गीत के साथ जोड़ने पर कैसा अनुभव होता है उसकी एक बानगी देखें यथा,

'गवना करवल ए पिया, घरे बइठवलऽ,
अपने चलेल राजा हो, पूरबी बनिजिया,........
केकरा से आगी मांगबि, केकरा से पनियाऽ,
आहे केकरा से पनिया,........3.....
केकरा से कहबि पिया हो, दिलवा के बतिया....
बाउर जमाना बाटे, घर बा अलोता,
आहे घर बा अलोता,.........3.....
कइसे के काटबि पिया, अकेले में रतिया।

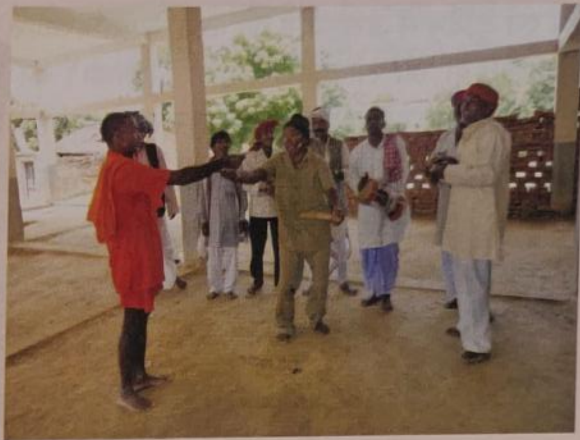

उपरोक्त गीत का गायन करके जब इस वाद्ययन्त्र को बजाते है तो श्रृंगार रस के वियोग पक्ष का साक्षात् स्वरूप खड़ा हो जाता है। वह नवयुवती नारी गीतों के माध्यम से अपने पति को सतर्क कर रही है। उसकी वेदना, उसकी टिस, उसका दर्द, उसका मनोरथ सब गीत में स्पष्ट रूप में दिखाई दे रहा है। वह बद्तमीज जमाने पर से अपना विश्वास उठा चुकी है। उसे एकदम विश्वास नहीं है कि वर्तमान दौर कब दगा दे देगा कोई निश्चित नहीं है। गीतों के माध्यम से वह एक नई–नवेली नारी की आवश्यकताओं एवं उनकी पूर्ति का प्रश्न भी कमाने जाने वाले पति के समक्ष रख रही है। लोकसाहित्य, लोकराग, लोककला, लोकवाद्य, लोकनृत्य, लोकनाटक के अलावा इस प्रकार का दर्शन अन्य कलाओं, वाद्यों में बहुत कम ही देखने को मिलता है। इस वाद्ययन्त्र एवं सम्बन्धित गीतों में मनोरंजन के साथ–साथ एक काव्यमय संरचना एवं सामाजिक दर्शन का साक्षात् स्वरूप सामने उपस्थित नजर आता है। श्रृंगार अपने अन्तिम बिन्दु पर जाकर भी स्थिर नहीं हो पाता है। गीतों की साँस भोजपुरी शब्दों के डायलिसिस पर ही चलता है। जो मिठास, दर्शन, आदर्श एवं सामाजिक स्वरूप भोजपुरी भाषा, बोली के गीतों में मिलता है, विश्व की किसी अन्य भाषा में न तो है और न भविष्य में मिलेगा ऐसी परिस्थितियां बता रही हैं। उच्चस्तरीय मनोरंजन के संसाधन में भोजपुरी गीतों को अग्रगण्य माना जाता है। लोकवाद्य तो समाज की रीढ़ है। इनके बिना स्वस्थ समाज की कल्पना ही निरर्थक है। लोकवाद्यों में हुडुका (हुरुका) वाद्ययन्त्र को सिरमौर या (दुल्हा) कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसकी प्रशंसा करना सूरज को दीपक दिखाने के समान है। सामजिक चेतना में यदि किसी का अमूल्य सहयोग है तो वह इसी वाद्ययन्त्र का है। वर्तमान में यह वाद्ययन्त्र मनोरंजन का साधन ही नहीं अपितु एक सामाजिक आधार बन चुका है। इस वाद्ययन्त्र एवं गीतों के क्रम को आगे बढ़ाकर एक पादान आगे चलने पर जब नवयौवना स्त्री का पति जिविकोपार्जन हेतु सुदूर चला गया है, और दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु न तो धन प्रेषित करता है और न किसी प्रकार का समाचार देता है तो, पत्नी अत्यन्त अधीर हो जाती है। अधीर हो भी तो क्योंन हो? बहशी जमाने का

'गवना करवल ए पिया, घरे बइठवलऽ,

अपने चलेल राजा हो, पूरबी बनिजिया,........

केकरा से आगी मांगबि, केकरा से पनियाऽ,

आहे केकरा से पनिया,........3.....

केकरा से कहबि पिया हो, दिलवा के बतिया....

बाउर जमाना बाटे, घर बा अलोता,

आहे घर बा अलोता,.........3.....

कइसे के काटबि पिया, अकेले में रतिया।

उपरोक्त गीत का गायन करके जब इस वाद्ययन्त्र को बजाते है तो श्रृंगार रस के वियोग पक्ष का साक्षात् स्वरूप खड़ा हो जाता है। वह नवयुवती नारी गीतों के माध्यम से अपने पति को सतर्क कर रही है। उसकी वेदना, उसकी टिस, उसका दर्द, उसका मनोरथ सब गीत में स्पष्ट रूप में दिखाई दे रहा है। वह बद्तमीज जमाने पर से अपना विश्वास उठा चुकी है। उसे एकदम विश्वास नहीं है कि वर्तमान दौर कब दगा दे देगा कोई निश्चित नहीं है। गीतों के माध्यम से वह एक नई–नवेली नारी की आवश्यकताओं एवं उनकी पूर्ति का प्रश्न भी कमाने जाने वाले पति के समक्ष रख रही है। लोकसाहित्य, लोकराग, लोककला, लोकवाद्य, लोकनृत्य, लोकनाटक के अलावा इस प्रकार का दर्शन अन्य कलाओं, वाद्यों में बहुत कम ही देखने को मिलता है। इस वाद्ययन्त्र एवं सम्बन्धित गीतों में मनोरंजन के साथ–साथ एक काव्यमय संरचना एवं सामाजिक दर्शन का साक्षात् स्वरूप सामने उपस्थित नजर आता है। श्रृंगार अपने अन्तिम बिन्दु पर जाकर भी स्थिर नहीं हो पाता है। गीतों की साँस भोजपुरी शब्दों के डायलिसिस पर ही चलता है। जो मिठास, दर्शन, आदर्श एवं सामाजिक स्वरूप भोजपुरी भाषा, बोली के गीतों में मिलता है, विश्व की किसी अन्य भाषा में न तो है और न भविष्य में मिलेगा ऐसी परिस्थितियां बता रही हैं। उच्चस्तरीय मनोरंजन के संसाधन में भोजपुरी गीतों को अग्रगण्य माना जाता है। लोकवाद्य तो समाज की रीढ़ है। इनके बिना स्वस्थ समाज की कल्पना ही निरर्थक है। लोकवाद्यों में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को सिरमौर या (दुल्हा) कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसकी प्रशंसा करना सूरज को दीपक दिखाने के समान है। सामजिक चेतना में यदि किसी का अमूल्य सहयोग है तो वह इसी वाद्ययन्त्र का है। वर्तमान में यह वाद्ययन्त्र मनोरंजन का साधन ही नहीं अपितु एक सामाजिक आधार बन चुका है। इस वाद्ययन्त्र एवं गीतों के क्रम को आगे बढ़ाकर एक पादान आगे चलने पर जब नवयौवना स्त्री का पति जिविकोपार्जन हेतु सुदूर चला गया है, और दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु न तो धन प्रेषित करता है और न किसी प्रकार का समाचार देता है तो, पत्नी अत्यन्त अधीर हो जाती है। अधीर हो भी तो क्योंन हो? बहशी जमाने का

डर एवं दुर्दिन में असहयोग की वस्तुस्थिति बरकारार है। आगे के लोकगीत में जो लोकवाद्य हुडुका (हुरूका) का वादन करके संगति के साथ गायन किया जायेगा उसमें स्पष्ट होगा। यथा,

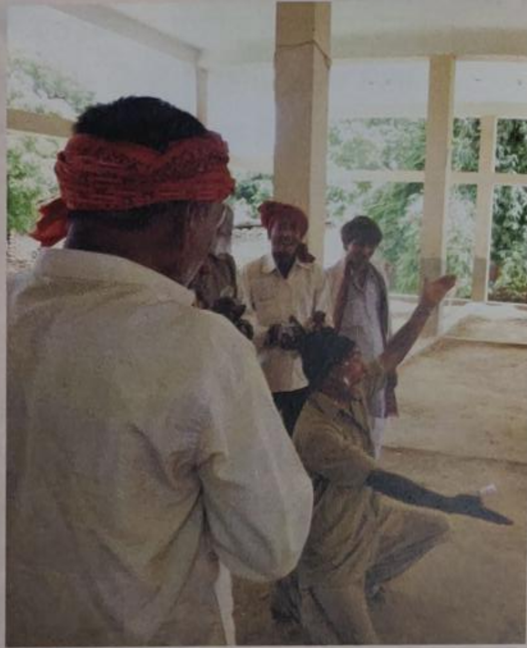

'रतिया–बिरतिया में, झखतारी गोरिया,
गइले दुकहिये पिया हो, पूरूब की ओरियाऽ,
चिठी–पाती दिहले नाहीं, भेजले सनेसवाऽ,
नाही टेलीफोनवों से दिहले खबरियाऽ......
कहले की आइबि हाले, लेके धनि गहनाऽ,
कुरूती आ साया संगे हरियर चुनरियाऽ,
ताक तानीं रातो–दिने, बाहरा बइठि के,
कहिया ले अइहें पिया, तेजि के शहरिया,
अब ना अगोरबि बेसी सुनिल सजनवाऽ,
हाले देने नइहर के धरबी डहरियाऽ।

एक नवयौवना स्त्री को आधुनिक समाज किस दृष्टिकोण से देख रहा है यह किसी से छिपा नही है। लोक साहित्य का यह गुण है कि वह समाज की भीतरी तह में जाकर अच्छाई या बुराई को देखता है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र लोक साहित्य एवं लोककला का एक अभिन्न एवं अति महत्वपूर्ण अंग है। अत: इस वाद्ययन्त्र का प्रभाव तो समाजोत्थान हेतु होगा ही। उपरोक्त गीत में नव दुल्हन एवं नौजवान पति के बीच लम्बा अन्तराल एवं विछोह होने के कारण वह एकान्त में बैठकर सोचने लगती है। वह नाना प्रकार की कल्पना करती है कि पता नहीं क्यों जबसे पति अर्जन करने हेतु परदेश गये तब से न तो प्राचीन संसाधनों से और न आधुनिक संसाधनों से ही किसी प्रकार की सूचना दिये और न घर चलाने के लिए रुपया भेजे। पत्नी अपनी कल्पना को ऊँचा आयाम देकर सोचती है कि वादा करके गये कि तुम्हारे लिए इच्छित परिधान लेकर आयेंगे। परिधान की बात तो अलग है वे खाली हाथ भी नहीं आ पाये। नवयुवती स्त्री मन में नाना प्रकार के विकल्पों की तलाश कर रही है। वह परदेशी पति के दर्शन एवं नयन सुख हेतु सारे कार्यों यहाँ तक की स्नान, भोजन से भी लापरवाह होकर जिस दिशा में वे गये उस दिशा में एकटक आँखो से रास्ते को देख रही है। यह क्रम कई दिनों–महीनों तक चलने के बाद वह मन ही मन आक्रोशित होकर अन्तिम फैसला लेती है कि अब इन्तजार की घड़ियाँ अत्यन्त नजदीक हैं। यदि परदेशी पति के घर आने में विलम्ब हुआ तो एक मात्र विकल्प मायके जाना सोचकर गमों के

आँसू पीने लगती है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं इसके गीतों का मूल्यांकन करना बड़ा ही दुरूह कार्य है। यह वाद्ययन्त्र कवि बिहारी की उन पंक्तियों को शत–प्रतिशत सत्य करता है जिसमें उन्होने अपनी 'बिहारी सतसई' में लिखा है कि,

''सतसैया के दोहरे, ज्यों नाविक के तीर,
देखन में छोटो लगे, घाव करे गम्भीर''

यह वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित वाद्ययन्त्र या सहयोगी संसाधन बहुत अधिक मूल्य के नही होते हैं। सभी आकृति में छोटे से छोटे होते हैं परन्तु इनका इतिहास, इनका प्रदर्शन, इनका उपयोग, इनका प्रतिफल एवं इनका समाज पर प्रभाव अमूल्य है। लोक कल्याण के लिए जितना कार्य हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र ने किया है, अन्य कोई भी वाद्ययन्त्र नहीं किया है। हमारे समझ से इस वाद्ययन्त्र की उत्पत्ति ही इसी उद्देश्य से भगवान शिव या अन्य शक्तियों ने की होगी। चूँकि समाज से इन महाशक्तियों को भी बल मिलेगा अत: स्वस्थ एवं परिष्कृत समाज की नितान्त आवश्यकता थी एवं अब भी है। वाद्ययन्त्रों के माध्यम से समाज विकासोन्मुख हो, चेतनमय बने, विशाल परिवर्तन हो यही सोच तबके लोगों एवं आविष्कारकों की रही होगी। उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल का हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र इसी की एक कड़ी है। मैने पहले भी यह चर्चा की है कि लोकसाहित्य, लोककला, लोकराग, लोकनृत्य, लोकवाद्ययन्त्रों का विलोपन हो जायेगा तो समाज का ही अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के कलात्मक पक्ष का विवेचन करने पर कागज कम पड़ जायेगा एवं लेखनी को विश्राम लेना पड़ जायेगा। जब–जब सामाजिक ढाँचा चरमराया है, तब–तब लोक वाद्ययन्त्रों ने समाज एवं राष्ट्र को मजबूती से दिशा प्रदान किया है।

पूर्वी उत्तर प्रदेश के प्रमुख वाद्ययन्त्र हुडुका (हुरूका) के कला एवं गीतों को लेकर जब हम आगे बढ़ते है तो वह बिन्दु समाज सुधार का आता है। आज समाज में अनाचार, दुराचार, अन्धविश्वास, जातिवाद, धर्मबाद, वर्चस्ववाद, अहंवाद, नशाखोरी, ठगहारी, कृतघ्नता, चोरी, लूटमार, डकैती, अपकार का सर्वत्र निवास हो गया है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र पर आधारित एक गीत को देखे कि कैसे यह बुरे समाज को पारदर्शी बनाने का काम करता है। यथा,

कहलो ना जाता हो, कहलो ना जाता,
का कहीं यार कुछु कहलो ना जाता...........3......
कलपि–कलपि के माई–बाबू बकरी नीयन मिमियाता,
बबुआ भइले सवख में आन्हर, मेहरी के माला फेराता........3.....

गाँजा, भाँग, शराब आ ताड़ी, गली–गली बिकाता,
अइसन चढ़ल कपार पर नाशा, पी–पी लोग ढ़िमिलाता......3....
चोरी–डकइती बढ़ि गलइ बा, पुलिस से केहू ना डेराता,
नोकरी भइली रिश्वत के लउड़ी, कोर्ट–कचहरी बिकाता......3....
पहिले से जे धनी बाटे, धनिये होखल जाता,
डहकतारे किसान–मजूरा, करज से चाम छिलाता........3....
डहरी जेकरा चले ना आवे, नेता उहे कहाता,
पइसा देके रते–राती, सगरे ओट किनाता.......3....
डर के मारे सिधवा लोगवा, गली–गली लुकाता,
हे भगवान बताईं रउरे, भारत कहवाँ जाता.......3....

वर्तमान सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, व्यवहारिक, आर्थिक स्थिति भारत एवं समाज की क्या है, यह आइना दिखाने का कार्य यह गीत एवं इससे सम्बन्धित वाद्ययन्त्र हुडुका (हुरूका) का ही हो सकता है। हम तो यह कहते है कि यह वाद्ययन्त्र ही नही अपितु एक सामाजिक चेतना का माध्यम है। इसे मनोरंजन का साधन मानकर भले ही हम देखते एवं सुनते हैं परन्तु यह इस स्तर से दूर काफी दूर है। गीत यह बयां कर रही है कि भारत का वर्तमान ढांचा क्या है? हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र समाज के उस स्थान पर एवं परिस्थिति पर पैठ बना लेता हैं जहाँ दुनिया के वाद्ययन्त्र न तो पहुँचे हैं और न भविष्य में पहुँचने की स्थिति में हैं। उपरोक्त गीत में समाज की वर्तमान स्थिति का सजीव चित्रण इसका स्पष्ट उदाहरण है। यह वाद्ययन्त्र अपने निष्कासित ध्वनि से एवं गीतों से समाज की बेवसी एवं लाचारी को बयां करते हुए कहता है कि समाज की प्रदूषित दशा देखने के बश की बात नहीं है। अधिकांश माता–पिता आज अनादर की दृष्टि से देखे जा रहे हैं एवं पुत्र अपनी स्त्री की खुशामद में लगे रहते हैं। नशीली एवं समाज विध्वंसक वस्तुएं बे रोक–टोक सर्वत्र उपलब्ध हैं जिससे आज का समाज प्रतिदिन प्रदूषित हो रहा है। चोरी,डकैती, रहजनी का सर्वत्र बोल बाला है। पुलिस स्वार्थ एवं लाभ का मंसूबा लेकर अनजान बनी रहती है। कदम–कदम पर रिश्वत का अधिकार है। सम्पन्न लोग रोज सम्पन्न हो रहे हैं और निर्धन रोज निर्धन। दुनिया का पालन–पोषण कर्त्ता ग्रामदेवता किसान आज मजबूरी, बेवसी एवं लाचारी की जिन्दगी जी रहा है। कार्य के बोझ से प्रतिदिन दबता चला जा रहा है। गीत में सारांश के रूप में मिलता है कि यह भारत देश भगवान के भरोसे ही है। इतना उच्चकोटि का दर्शन, समाज सुधार का रास्ता कहाँ मिलेगा। हरूका वाद्ययन्त्र एक अनोखा एवं अद्भुत गहराई अपने में समाहित किये हुए है। इस वाद्ययन्त्र की प्रत्येक ध्वनि

सदाचार, सुविचार, समानता, एकता, पारदर्शिता एवं अध्यात्म का पाठ पढ़ाती है। वादक गणों का भाव के साथ वादन यह प्रदर्शित करता है कि समाज के अच्छे–बुरे कार्यों की विवेचना समाज सुधारक व्यक्ति ही नहीं अपितु वाद्ययन्त्र भी कर सकते हैं। हुडुका (हुरूका) के अन्दर वह प्रतिभा है कि वह समाज को नई दिशा दिया है एवं दे सकता है। जब–जब समाज पर पथ–भ्रष्टता की छाया पड़ी है तब लोकवाद्य समाज को दिशा देने का काम किये है। इस वाद्ययन्त्र के अन्दर वह हुनर है जिससे यह एक नई दुनिया का निर्माण कर सकता है। यह तो समाज के दर्द एवं विकृति की बातें रहीं । इस वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित कलाओं ने समाज को बड़ी ही पैनी नजर से देखा है। वर्तमान विकासशील से विकसित के कतार में खड़े भारतके सम्बन्ध में भी गीतें गाकर उसके साथ वादन का संयोजन करके हुडुका (हुरूका) ने अपनी प्रशंसा में बृद्धि की है। यह गीत स्पष्ट रूप से बतायेंगी कि यह वाद्ययन्त्र समाज की बुराइयों को ही देखकर उसे सुधारने का प्रयास नहीं किया है अपितु अच्छाइयों का भी गुणगान किया है। एक बानगी देखें–

'बदलल जमाना हो, बदलल जमाना,.....2.....
अब ना तबाही रही बदलल जमाना''.......3.....
नया तरह के कपड़ा आइल, नया तरह के खाना,
नया–नया सब घर बनिगइले, अब नाही मारी केहू ताना,.......3.....
सुख–सुविधा के बाढ़ि आ गइल, केहुए निर्धन बा नाऽ,..........2.....
सुख के दिनवा देखि–देखि के, मस्ती में गावे लोग गाना।........3.....

उपरोक्त गीत में मुख्य वादक वाद्ययन्त्र की गति कभी मन्द एवं कभी अतितीव्र करके वादन करता है। कभी बैठकर कभी दसों दिशाओं में घूम–घूमकर, कभी अलग–अलग होकर करते है। कभी–कभी ऐसा होता है कि मजीरा वादक चारो कोनों पर चारो ओर हो जाते है, एवं मुख्य वादक बीच (केन्द्र) में रहता है। वादन का क्रम जारी रहता है गीत जब अन्तरा के समाप्ति एवं टेक के प्रारम्भ के पास पहुँचती हैं तो चारो वादक दौड़–दौड़कर अपने मुख्य वादक को घेर लेते है एवं ऊर्जा भरी भुजाओं से वादन करते है। नर्तक उछलकर, कूदकर, एक दूसरे का हाथ पकड़कर, जोड़ा बनाकर, कमर पकड़कर मस्त भरी अदाओं से नर्तन करके मन को मोह लेते हैं। उपरोक्त गीत के गायन एवं वादन से यह स्पष्ट होता है कि यह वाद्ययन्त्र सिर्फ समाज की बुराइयों को देखकर उन्हे सुधारने का काम नहीं करता है। बल्कि सुसंगठित, व्यवस्थित, शिक्षित एवं प्रशंसनीय समाज की प्रशंसा भी करता है। यह वाद्ययन्त्र प्राचीन में प्राचीन की तरह एवं आधुनिकता में आधुनिक बन जाता है। उपरोक्त गीत में नई व्यवस्था, सुख–सुविधा, विकास का गुणगान तो किया ही गया है यह अपने मातृभूमि एवं देश के प्रति अपार प्रेम का परिचायक भी है। यह बताता है कि जो समय गन्दा था वह था अब नहीं है और न रहेगा। क्योंकि जमाना बदल चुका है। नई खेती, नई शिक्षा, नये पोशाक, नया इलाज, नई

तकनीकि, नई रक्षा प्रणाली, समस्त स्थानों पर नवीनता का प्रभाव एवं निवास हो गया है। आधुनिकीकरण ने प्राचीन व्यवस्था को समाप्त करने का मन बना लिया है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का कलात्मक परिधि बड़ा ही विस्तृत एवं ऊँचाई की क्षमता वाला गगनचुम्बी है। वाद्ययन्त्र को 'आल इन वन' कहा जाय तो उसके साथ सही न्याय होगा। इस विद्रुप समाज को चाहिए कि अभियान चलाकर इस वाद्ययन्त्र को गाँव–गाँव भ्रमण कराया जाय, प्रदर्शन कराया जाय और प्रदूषित होते समाज को परिष्कृत करने का काम किया जाय। स्तुति, भजन, देश प्रेम, प्रदूषण, अभाव, विकास के साथ–साथ यह वाद्ययन्त्र अपनी कला से मानव जीवन के अन्तिम पड़ाव पर भी तीव्र प्रकाश डाला है। यह सगुण एवं निर्गुण दोनों के उपासकों को अपनी कला का बोध कराया है। कबीरदास के पंथानुरागियों को भी इसने अपना आदर्श दिखाया है। इससे यह ज्ञात होता है कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र सबसे बड़ा समाज सुधारक है। यह वाद्ययन्त्र चेतावनी देता है कि दाढ़ी बढ़ा लेने से, गेरूआ पहनने से, मन्दिर–मस्जिद पर निवास करने से परम पद की प्राप्ति नहीं होगी अपितु इसके लिए विचारों की शुद्धता एवं मानव सेवा का कर्त्तव्य बोध भी होना चाहिए। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित एक गीत को देखें।

'नइया बीचे नदिया डुबल हो जाइ'
एक अचरज हम देखलीं जग में,
बानर दुहत गाइ.........
बनरू दुधवा खा–पी गइले,
घीउवा बनारस जाई..........

कबीरदास का एक प्रचलित दोहा है कि,

'कबीरदास की उल्टा बानीं,
बरिसे कम्बल भीजे पानी।

नीचे के कबीरदास के दोहें एवं, ऊपर के गीत की तुलना जब हम करते हैं तो भाव स्पष्ट हो जाता है। उपरोक्त गीत कहीं और है एवं उसका अर्थ कहीं और है। गीत कबीरदास के साहित्य से लगभग मिलता–जुलता सा है। प्रत्यक्ष में अर्थ कुछ और निकलता है जबकि रहस्य में दूसरी ही बातें अपना स्थान बनाये हुए है। नदी, नाव में कभी भी नही डूब सकती है परन्तु गीत के भाव यह वर्णन कर रहे हैं कि, छोटी सी अच्छाई बहुत बड़ी बुराई को अपने पास बुलाकर उसे समाप्त कर सकती है। वानर का अर्थ यहाँ ऐसे नर से लिया गया है जो अज्ञानी है। वेद, शास्त्र, उपनिषद, धर्म, अधर्म, अच्छा–बुरा का ज्ञान उसे अति अल्प है। प्रारम्भ में ऐसे व्यक्ति नाना प्रकार के उधम मचाते हैं लेकिन अन्त में कोई महान ज्ञानी व्यक्ति के पाले पड़ने पर या तो वह सुधारात्मक स्वरूप पकड़ कर नेक बन जाता है या बर्बाद हो जाता है। कुल

मिलाकर यह मालूम होता है कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र सामाजिक सुधार के लिए ही अवतरित हुआ है। यह वाद्ययन्त्र अपनी गीतों के साथ संगत करके मानव एवं मानवता को कदम–कदम पर सतर्क किया है। यह उपदेश देता है कि मानव को कभी भी अमानवीय नहीं बनना चाहिए। यह दुनिया क्षणभंगुर है। हम इस दुनिया में किराये के घर की तरह आये हैं। एक न एक दिन तो इसे छोड़ना ही पड़ेगा। सावधान करते हुए इस वाद्ययन्त्र का गीत कहता है कि,

चेत ए मन मूरख चेत, पाछे तुँ पछतइब हो,.......3.....
मुठ्ठी बान्हि के आइल बाड़, हाथ पसरले जइब हो,
आगी में फुकइब चाहें, माटी तर दबइब हो,......3.....
अन, धन, कवनो काम ना करी, रोवत–रोवत मरि जइब हो,.......3.....
कुछऊ तहरा संगे ना जाई, ओही तरे छपिटइब हो।........3.......

इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित गीत यह सुझाव देते है कि मानव तन एक कच्चे घड़े के समान है। बड़े ही भाग्य से यह शरीर मिला है तो जितना हो सके इससे सुकर्म ही करना चाहिए। कुकर्म नरक का रास्ता है।

## हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र की एक विशेष कला

इस वाद्ययन्त्र में गीत, नृत्य, प्रहसन, एकांकी, नाटक आदि ही नहीं है बल्कि इसमें अद्भुत एवं असंख्य आश्चर्य भरी कलायें भी भरी पड़ी हैं। कभी–कभी ऐसा होता है कि मुख्य वादक स्थिरता की स्थिति में कंधे में लटकी डोरी को ढीला करके भभक.....भभक, भभक, भभक की आवाज करते हुए लगातार बजाता रहता है। मजीरा वाले दोनों हाथों में हाथ को उठाकर खड़ा हो जाता है। सिर पर मोटी–मोटी गद्दीदार पगड़ी बँधी होती है ताकि आधा–एक किलोग्राम के मजीरे की रस्सी कहीं से टूटे तो सिर पर मजीरा नहीं गिरे अन्यथा सिर पर 'हेड इन्जुरी' का खतरा बना रहता है। हुरूका वादक जब भभक–भभक का वादन प्रारम्भ करता है तो एक मजीरा वादक अपने दाहिने हाथ का मजीरा दूसरे मजीरा वादक के दाहिने हाथ पर मारता है एवं एक मजीरा वादक अपने बाँये हाथ का मजीरा दूसरे मजीरा वादक के बाँये हाथ पर ताल एवं सुर के साथ कूद–कूदकर मारते हैं। चूकि प्रारम्भ में बताया जा चुका है कि मुख्य हुडुका (हुरूका) वादक एक एवं मजीरा वादक चार यानी दो जोड़ा होते हैं अतः एक के सामने दूसरा एवं तीसरे के सामने चौथा खड़ा होकर बजाते है। विभिन्न प्रकार की कलाओं का प्रदर्शन उनके बीच होता है। नर्तक उसी ताल एवं सुर के अनुसार नर्तन का कार्य सम्पादित करते हैं। हरबोला या जोकर हास्य की सामग्री लेकर अलग–अलग हास्य के कारनामें दिखाकर लोगों को अपने पक्ष में किये रहते हैं।

अश्लील एवं अभद्र शब्दों का सदा–सदा प्रयोग करते हैं फिर भी वे सार्थक एवं सारगर्भित रहते है। कभी–कभी नर्तक

विश्राम करने लगते है एवं हुडुका (हुरूका) वादक तथा मजीरा वादक ही वादन करते हुए कुछ अन्य कलाओं को प्रदर्शित करते हैं जिनको देखकर एवं सुनकर दर्शक मंत्रमुग्ध हो जाते है। अश्लीलता एवं उदण्डता का समावेश एवं प्रयोग होने के कारण ही इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित नृत्य एवं नाटकों के प्रदर्शन हेतु घनी बस्ती से दूर एवं महिलाओं से अलग रखा जाता है। हरबोला जिन्हे देहाती भाषा में बोलिहा या जोकर कहते है उनका पोशाक अति हास्यास्पद होता है। वे अर्द्धनग्न, चिथड़ा पहने शरीर पर मिट्टी लगाये चेहरा को हास्यापद बनाये अपनी कला का बखूबी प्रदर्शन करते हैं। वे हाथ में भरंगा (थेथरा) एवं बाँस की बकुड़ी (कुबरी) को लेकर हास्य रस के अन्त बिन्दु पर श्रोता एवं द्रष्टा को पहुँचाने का काम करते है। भरंगा (थेथरा) को उपर आसमान में करके बारी–बारी से एक दूसरे के सिर पर हल्का सा चोट करके अतिवेग में दौड़ते एवं पीछा करते है। उनकी सारी क्रिया एक कलात्मक रूप दर्शकों के भरपूर मनोरंजन हेतु होती है। वे कहते है–

हो–हो–हो–हो–हो–हो–हो, हा–हा–हा–हा–हा–हा–हा,  
जीय हो मृदंगी लाल, दहिनी छाती बायां गाल''

(1) छोटी चुकी गाजी मियाँ, लमहर पोंछि,  
इहे जाले गाजी मियाँ, धरीहे पोंछि

उपरोक्त दोहे को बार–बार कहकर हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं मजीरे को बार–बार बजाते हैं एवं भरपूर नृत्य करके रोचक से भी रोचक बना देते हैं। इस दोहे के माध्यम से वे मनोरंजन ही नहीं अपितु पहेलिओं को समाज के सामने रखते हैं। उपरोक्त दोहा एक पहेलिका ही है, जिसका अर्थ डोरा लगा हुआ सुई है। आगे दूसरे कला के रूप में वे पुन: कला के प्रदर्शन में एक जोकर एक बात को कहता है तो दूसरा 'जिय भइया जिय हो' बार–बार कहता है यथा,

(2) छपरा से रेल आइल, ओपर बइठे कउवाऽ,  
जिय भइया जिय हो, जिय भइया जिय हो,  
छपरा से गाड़ी आइल ओपर बइठे कउवा,  
हच–हच माजा काटे, इहे ह बेटउवा''.........3.....

इस दोहे को कहकर हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र भभक दे, भभक दे बजवाते हुए खूब नाचते है दर्शकों में से किसी खुराफाती बच्चे का पैर पकड़कर एकाएक घसीट कर, पीठ पर रखकर कुछ ऐसी हरकत करते हैं कि, दर्शक हँसते–हँसते लोट–पोट हो जाते हैं परन्तु वे स्वयं नहीं हँसते।

हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र की एक और महत्वपूर्ण कला का प्रदर्शन सभी कलाकार मिलकर करते हैं। दोनों

हरबोला (जोकर) हाथ में भरंगा लेकर एवं नर्तकों सहित, सिर पर लुकार रखकर सर्वप्रथम उत्तर–पश्चिम कोण हुरूका की भाषा में भण्डार कोण कहते है उधर से प्रारम्भ करके बजाते है। हुडुका (हुरूका) मे भं–भं–भं–भं–भ–भ–भ, भभ–भभ–भभ–भभ, भभ, भभ की ध्वनि निकालकर बजाया जाता है। जोकर हाव–भाव एवं हास्य रस के अदा के साथ गाते है,

ऊँची–ऊँची घरवा के नीची दुआरि,
आहि दावो रे मोहे, काहे के बोलवले...........5.....
आहि दावो रे मोहे काहे के बोलवले
आहि दावो............................

वाद्योपरान्त एवं उससे सम्बन्धित वाद्यों को लगभग पाँच मिनट तक बचाकर नृत्य करके गाते हैं। तब तक दूसरी बार पुनः गाते हैं,

नीची दुयरिया में, ढुकहू ना पवलीं,
आहि, दाबो रे, लबादा तानि मारे।..........5......

यह गीत यह वाद्य एवं यह कला लगातार चलता रहता है। सभी दिशाओं एवं कोणों में घूम–घूमकर दर्शकों की तरफ मुँह करके इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित वादन, गायन, नर्तन के कला को आयाम दिया जाता है। लकड़ी एवं बाँस से बनाये गये कृत्रिम घोड़े को एक अन्य कलाकार लेकर कभी तेज दौड़ाता है तो कभी पैरों को चलाकर नर्तन करते है, जिससे रोचकता का ग्राफ ऊपर हो जाता है। उपरोक्त मुहावरा यह दर्शाता है कि वैभव बहुत अधिक हो, विलासिता की तमाम वस्तुएँ उपस्थित हों, भौतिक सुख की समस्त सामग्री हो लेकिन नीची दुआर अर्थात सम्मान नहीं मिला तो मुझे क्यों बुलाया गया? इस स्थिति में जो अपने मन से अपमान का डर न करके पहुँचता है तो उसे लबादा अर्थात अपमानित होना ही पड़ेगा। इस गीत का सन्दर्भ एवं प्रसंग दोनों ही समाज का आइना है। कभी–कभी हरबोले (जोकर) पूरे कलाकारों को गन्दी–गन्दी गालियाँ देते हैं। इसमें भी कुछ भावार्थ छिपा हुआ है। जोकर कलाकारों को गाली इसलिए देते हैं कि वे सतर्क रहें और समझे कि यह समाज किसी को अपमानित एवं सम्मानित कब और कहाँ करेगा इसकी फिक्र किये बिना समाज को पथभ्रष्ट होने से बचाना जरूरी है। नर्तकों से ऐसे सम्बन्ध सूचक शब्दों से सम्बोधित कराते हैं जैसे देहातों में औरतें अपने ससुर, जेठ, देवर आदि से करती हैं। इसमें भी गहराई का ही आलम है। महिला दर्शक एवं श्रोताओं को वे अपने माध्यम से बताने का प्रयास करते हैं कि अपने घर के पुरूषों के साथ इसी प्रकार का व्यवहार, मृदुभाषिता एवं सम्बन्ध का प्रयोग करना चाहिए। कुल मिलाकर हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एक कलात्मक परिधि का अंग है। यह सामाजिकता, अध्यात्म, देशप्रेम, मनोरंजन, फिजूलखर्च से बचना एकता एवं समानता की

डोर को मजबूत करने का केन्द्र बिन्दु है। जैसे विभिन्न नदियाँ, विभिन्न मार्गों से अपने एक ही गन्तव्य समुद्र में जाकर मिलती हैं, उसी प्रकार यह वाद्ययन्त्र सभी प्रान्तों, जिलों, शहरों, गाँवों में अपनी कला का प्रदर्शन करते हुए सामाजिक सुधार रूपी समुद्र में मिल जाती है। हमें हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र की अस्मिता की रक्षा हेतु जागृति पैदा करने की आवश्यकता है। वर्तमान के नवयुवकों, बच्चों, किशोरों को इसकी आदि–अन्त तक चर्चा करके हमेशा प्रयोग एवं चिन्तन में रखना चाहिए। यह समाज का दायित्व है।

## उत्तर प्रदेश/उत्तरांचल के हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र

### एवं लोकनृत्य के साथ प्रहसन, लघुनाटिका, एकांकी एवं नाटक का प्रयोग

हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित नृत्य तथा कलाओं के प्रदर्शन में उपरोक्त कलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। इसे लोकप्रिय समाज सुधारक एवं मनोरंजन बनाने में इनका अभिन्न योगदान रहा है एवं वर्तमान में है। नाचते–नाचते जब थोड़ा थकावट हो जाती है तो, शारीरिक विश्राम एवं मनोरंजन का स्वाद बदलने के लिए इनका प्रयोग आवश्यक हो जाता है। बीच–बीच के अन्तराल में बीस से तीस मिनट के लिए जो अन्य कला दिखाई जाती है उसे 'खियाल उतारना' कहते है। यह खियाल उतारना समाज के लिए दर्पण का काम करता है। खियालों में प्रथम स्थान 'सोखइती' का होता है। इसके द्वारा अंधविश्वास पर करारा चोट किया जाता है। चूँकि अंध विश्वास समाज के लिए एक प्रमुख बुराई है अतः इसे प्रथम वरीयता के आधार पर समूल नष्ट करने के लिए वे प्रहार करते हैं। लुकार के चारो तरफ दो जोकर वे सारे कलाओं का प्रदर्शन करते है जो एक ढोगी सोखा (ओझा) करता है। प्रश्न–उत्तर का प्रयोग करके व्यंगात्मक शैली में गाली–गलौज का प्रयोग करके सोखाओं एवं सोखइती को परास्त किया जाता है। एक ही रिश्ता को चार बार बताते है जैसे– लड़के का ननिहाल, पत्नी का मायका, अपनी ससुराल एवं पिताजी के समधीयाना जो वास्तव में एक ही हैं, चार बताते हैं। दर्शक एवं श्रोता भरपूर आनन्द तो उठाते ही हैं, यह अनुभव करते हैं कि अन्धविश्वास का प्रतिकार करना चाहिए। इसके बाद बन्दर को छकाना, उससे संघर्ष करना एवं अन्त में उससे लड़–भीड़कर मारकर खुशी मनाने वाला 'खियाल' का प्रदर्शन किया जाता है। एक कलाकार

बन्दर का मुखौटा लगाकर उन सारी अदाओं का बखूबी प्रदर्शन करता हैं जो एक बन्दर करता है। जोकर के साथ गाली–गलौज, मारपीट होती है और अन्त में बन्दर परास्त हो जाता है। यह प्रदर्शन बन्दर को परास्त करने तक ही सीमित नहीं रहता अपितु, यह शिक्षा देता है किं अल्प बुद्धि वाले शारीरिक रूप से मजबूत व्यक्ति को बुरी आदतों से संघर्ष करना चाहिए। पीछे कभी नहीं हटना चाहिए। यदि आदमी बुराई से पीठ दिखा देगा तो भविष्य अन्धकारमय हो जायेगा। अत: बन्दर को बुराई का स्वरूप बनाकर जोकर उसके साथ व्यंग बातों का बाण चलाता है। उसे दौड़ा–दौड़ा कर थकाता है, और अन्त में संघर्ष करते हुए उसका बध करके खुशी में गीत गाता है। बन्दर रूपी असामाजिक व्यक्ति, भले आदमियों के साथ कभी भी अभद्रता कर सकता है। अत: बुराइयों से त्राहिमाम् नहीं करना चाहिए बल्कि संघर्ष करके परास्त करना चाहिए।

तदोपरान्त काली जी का 'खियाल' लाया जाता है। चूँकि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के कलाकार एवं गोंड़ जो अब गोंड जाति के लोग भगवान शंकर की प्राथमिकता देने के पश्चात् किसी देवता या देवी की तरफ ध्यान देते हैं। भरसक वे भगवान शिव के बाद सबका अपमान ही रटते हैं, अत: काली जी वाले 'खियाल' को वे इसी दृष्टिकोण से देखते हैं। काली जी को केन्द्र बिन्दु बनाकर वे जीवहत्या, बलिदान, बध, नशा प्रयोग, अन्धविश्वास भूत–पिशाच, सोखा आदि को नकारात्मक बनाने का प्रयास सदा करते हैं। काली जी की मूर्ति अपनी कला में ले आकर वे सारे सामग्री का इन्तजाम करते है जो एक अन्धविश्वासी काली का सेवक करता है। गीत, प्रसाद, बकरा, शराब, पूजा की सारी सामग्री, फूल, साड़ी आदि की व्यवस्था करके वे एक जोकर, स्वयं बकरा बन जाता है। तमाम अशोभनीय शब्दों का प्रयोग काली जी के सामने करते हैं। सब कुछ के उपरान्त वे समाज को दिखाते हैं कि मूर्तिपूजा, देखावटीपन, जीवहत्या से सद्‌गति नहीं मिलती है अपितु, मानसिक शुद्धता, नेक विचार, सुकर्म तथा परोपकार से मोक्ष मिल सकता है। इतना बड़ा दर्शन भला कहाँ देखने एवं सुनने को मिल सकता है?

अन्त में 'बकलोल दुलहा' का 'खियाल' किया जाता है। इसमें एक अनपढ़, बेवकूफ, अंग–भंग दूल्हे एवं मध्यस्थता करने वालें 'मीडिएटर' पर गहराई में, व्यंग किया जाता है। बकलोल दुलहा का स्वरूप एवं भाव–भंगिमा ऐसी होती है कि गम में डूबा व्यक्ति भी अपनी चुप्पी तोड़कर कुछ समय के लिए हँस सकता है। बोलिहा (जोकर) की उसमें अहं भूमिका होती है। विवाह के सारे कार्यक्रम, गीत, नियम, रस्म–रिवाजों का प्रचलन इस 'खियाल' के माध्यम से किया जाता है। दहेज लोभियों पर करारा चोट तथा मध्यस्थता करने वाले दलाल किस्म के व्यक्तियों की इतिश्री लगा दी जाती है। अन्त में निष्कर्ष के तौर पर यह दिखाया जाता है कि लड़की कोई भी हो वह देवी है। वही सबसे बड़ा दहेज है। वह लक्ष्मी है। काली या गोरी का भेद नहीं करना चाहिए। विवाह उत्सुकता पूर्वक स्वजातीय लड़की से सनातन धर्म के अनुसार करना चाहिए तभी समाजोत्थान एवं देश का विकास हो सकता है। खियाल में गीत, नृत्य, वादन बीच–बीच में चलता रहता है।

इसके उपरान्त प्रारम्भ होता है, नाटकों का क्रम। जैसा नाटक वैसा पोशाक की व्यवस्था, वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित कलाकार स्वयं किये रहते है। नाटकों में नशा उन्मूलन हेतु समाज को सतर्क करने हेतु 'नशाइल' नामक नाटक खेला जाता है। इसमें यह दिखाया जाता है कि एक नशेड़ी, नशा पीने के लिए कौन–कौन सा कुकर्म करता है। नशा के पीछे कैसे बर्बाद हो जाता है। समाज कितना हेय एवं गन्दी नजरों से देखता है एवं नशेड़ी का अन्त किस प्रकार होता है। यह देखने पर आँखे खुली की खुली रह जाती हैं। 'नशाइल' नाटक देखकर एवं उससे सम्बन्धित गीतों तथा वाद्य को सुनकर बहुतेरे लोगों का मन–मस्तिष्क परिवर्तित हो जाता है। वे नेक इन्सान की श्रेणी में आने के लिए विवश हो जाते हैं। 'नशाइल' के बाद 'बेटी–बेंचवा' नाटक दिखाया जाता है। हालांकि यह नाटक स्व0 भिखारी ठाकुर द्वारा रचित है। इस नाटक का सारांश यह होता है कि एक गरीब एवं असहाय दहेज देने में असमर्थ पिता अपनी कम उम्र की पुत्री को विवशता के कारण कैसे किसी धनी एवं साधन सम्पन्न उम्रदराज व्यक्ति के हाथों पैसा लेकर बेंचता है। बेटी जब दूल्हे के साथ जाने लगती है तो, उसके करूण क्रन्दन को सुनकर पत्थर दिल वाले व्यक्ति का हृदय भी पसीज जाता है। वह उम्रदराज व्यक्ति उस लड़की को ले जाता है और वह कमसीन लड़की पुनः मायके नहीं आ पाती है। ऐसे समाज विरोधी तत्वों की निष्ठुरता का प्रदर्शन भी ऐसे नाटकों में होता है।

'बेटी–बेंचवा' के बाद 'सौतेली माँ' नामक नाटक का प्रदर्शन प्रारम्भ होता है। यह नाटक अमूल्य एवं अद्भूत होता है। पहली पत्नी के एक औलाद पैदा होने के पश्चात् मरने पर पुरूष दूसरी शादी कर लेता है। दूसरी पत्नी इतना क्रूर एवं निष्ठुर तथा स्वार्थी हो जाती है कि पति की समस्त बातों की अवहेलना ही अपना बड़प्पन समझ बैठती है। वह सौतेले पुत्र को जान से मारने या मरवाने पर भी उतारू हो जाती है। इसके अतिरिक्त पाखण्डी साधु, भाई बिरोध, विदेशिया, नामी डकैत आदि–आदि नाना प्रकार के नाटकों को पूरी रात प्रदर्शन करते है। प्रदर्शन इस कदर का होता है कि श्रोता टस से मस होने का नाम नहीं लेते हैं। बीच–बीच में श्रोता एवं दर्शक नकद राशि पुरस्कार स्वरूप प्रदान करके कलाकारों के मनोबल को बढ़ाते रहते हैं।

भोर में लगभग तीन बजे के करीब वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित नर्तन, वादन एवं नाटक आ अन्तिम दौर धोबिया–

'धोबिनिया' प्रारम्भ होता है। यह नाटक छुआछुत का अनुपम नजीर होता है। वार्त्तालाप, प्रश्नोत्तर जो गीतों के माध्यम से ही होता है, उसे प्रयोग किया जाता है। एक नर्तक धोबिन बन जाता है और कलाकार धोबी। लम्बे समय तक प्रश्नोत्तर प्रणाली का प्रयोग किया जाता है। शर्त यह रखी जाती है कि जो प्रश्नोत्तर में परास्त कर देगा वही वह सुख–चैन का उपभोग करेगा एवं जो परास्त हो जायेगा वह अर्जन करने का कार्य करेगा। धोबी परास्त हो जाता है और सशर्त उसे धोबिन का जीवन–निर्वाह सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए करना पड़ता है। एक ठाकुर साहब की भूमिका इस नाटक में छुआछूत ,वाली कुप्रथा को समाप्त करने में अहं होती है। स्त्री के प्रति पुरूष का क्या कर्त्तव्य होना चाहिए यह इस नाटक में देखने को मिलता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित गीत, नर्तन एवं कलायें तो समाज के लिए प्रभावशाली काम तो करती ही है, लोक नाटकों का स्थान भी कहीं से कम नहीं है। लोक नाटक इस वाद्ययन्त्र की रोचकता की धुरी हैं। इस वाद्ययन्त्र से लोक नाटकों का चोली दामन का साथ है। सामाजिक ही नहीं अपितु आवश्यकतानुसार ऐतिहासिक, बोधगम्य श्रृंगारपरक नाटकों का प्रदर्शन भी इनसे किया जाता है।

## काल के दृष्टिकोण से हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र की तुलनात्मक व्याख्या

जैसा समय आया है यह वाद्ययन्त्र उसी के अनुरूप ढल गया है। दूसरी कलात्मक परिधि बड़ी ही सूक्ष्मता से अध्ययन करने की वस्तु है। काल के अनुसार देखने पर वाद्ययन्त्र की सामाजिक स्थिति का पता आसानी से चल जाता है।

## अतीत (भूतकाल) की स्थिति

यह विस्तार पूर्वक वर्णन किया जा चुका है कि इस वाद्ययन्त्र की उत्पत्ति से जन कल्याणार्थ हुआ। देवताओं विशेषकर महादेव भोलेनाथ के रिझाने का यह प्रमुख वाद्ययन्त्र है। बड़ा ही सशक्त एवं सुदृढ़ इसका अतीत रहा है। कहा गया है कि सुदृढ़ बुनियाद पर ही मजबूत एवं गगनचुम्बी इमारत की कल्पना की जा सकती है। वही धर्म या परम्परा स्थायी होती है जिसकी नींव बुलन्द एवं सबल होती है। भाषा के निर्माण से लेकर सामाजिक निर्माण एवं परम्पराओं के अभ्युदय में इस वाद्ययन्त्र की अहं भूमिका रही है। स्वयं देवता इस तथ्य को स्वीकारते हैं। इस वाद्ययन्त्र के माध्यम से तान्त्रिक, तन्त्रविद्या को नया आयाम दिये है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का अतीत बड़ा ही गौरवशाली, ऐतिहासिक एवं गूढ़ रहा है। यह एक रहस्य एवं रोमांस से परिपूर्ण वाद्ययन्त्र था। इसने एकतरफ धर्म के नये द्वार को खोला तो दूसरे तरफ जाति, वंश, कुल परम्परा को नवजीवन दिया। दानव को मानव यदि किसी ने बनाया तो वह यही वाद्ययन्त्र है। असभ्य को सभ्यता का पाठ पढ़ाया तो इसी ने। मानवता का सच्चापथ दिखाया तो हुरूका ने। इसे परम्परा से जोड़कर लोग अपने को सुरक्षित एवं संरक्षित करते रहे। यह दैहिक, दैविक, भौतिक तापनाशक तथा उज्जवल चरित्र का उदाहरण बना रहा। इस वाद्ययन्त्र के प्रति लोगों की अटूट आस्था एवं विश्वास है। कहीं यह नई दुनिया का आभास कराया तो कहीं उमंग का महासागर बनकर लोगों के दिलों में ज्वार–भाटा की तरह तरंगे पैदा किया। मितव्ययता का सशक्त उदाहरण था समाज में यह हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र। यह लोगों के पीछे–पीछे चला। इसने स्थिर समाज को एक नयी गति एवं ऊर्जा एवं नया मार्ग दिया। पूजन, वन्दन एवं शिष्टता का पाठ पढ़ाते हुए लोगों के दिलों में यह जगह बनाकर राज्य किया। देवताओं के महिमामण्डन का कारक बना। यह कितना प्रभावशाली एवं ग्राह्य था, इसका उदाहरण मिलना कठिन है। तब यह भूमि से शिखर का सफर तय करते हुए गगनचुम्बी बना। इसके ध्वनि से भूमण्डल

के समस्त चराचर प्राणी प्रभावित हो जाते थे। इतना प्रभावशाली होने का मुख्य कारण इस वाद्ययन्त्र का यथोचित संरक्षण एवं सम्मान मिलना था। जो जहाँ था वहीं इसका दीवाना बनता गया। चहेते अधिक होने के कारण इसकी चर्चा एवं प्रसिद्धि भी प्रसारित होती रही। इस प्रकार मुक्तकण्ठ से स्पष्ट कहा जा सकता है कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का अतीत (भूतकाल) बड़ा ही सुदृढ़, पारदर्शक एवं प्रभावशाली था।

## वर्तमान काल

एक गीत की एक कतार याद आती है कि 'सदा ना रहा है जमाना किसी का'। यह प्रकृति प्रदत्त नियम है कि जो ऊँचाई पर चढ़ता है उसे नीचे आना है। उत्थान के बाद पतन अवश्यम्भावी है। बच्चा ही बृद्ध बनता है। दिन के बाद रात को आना है। हँसने वाला सदा नहीं हँसता अपितु उसे रोना भी पड़ता है। ये सारी सूक्तियां हुडुका वाद्ययन्त्र के साथ भी चरितार्थ हुई। कहने का तात्पर्य यह है कि इस वाद्ययन्त्र का वर्तमान काल बहुत अच्छा नहीं है। इस पर अनेकों प्रकार के प्रभावशाली शक्तियों का प्रकोप हो गया है। जो हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र एक गाँव में गोंड़ जो अब गोंड जाति के घर-घर में टंगा रहता था वह एक गाँव में किसी-किसी के घर में भी बड़ा ही मुश्किल से देखने को मिल रहा है। एक तो लोगों की उदासीनता एवं दूसरे इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित सहायक सामाग्रियों की अनुपलब्धता भी कम घातक नहीं है। न वे कलाकार मिल रहे है, न नर्तक, न जोकर, न वाद्ययन्त्र का मेखला, न निर्माता, न पोशाक, न शीशे का बोतल। प्लास्टिक का हर स्थान पर बोलबाला हो गया है। कहीं-कहीं दो-चार-दस गाँवों के बीच में एक नृत्यमंडली मिल जाती है तो काफी समझ लेना चाहिए। इस वाद्ययन्त्र को बनाने वाले मिस्त्रियों का अभाव भी कम दोसी नहीं है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का वर्तमान बड़ा ही संक्रमण काल से गुजर रहा है। अरूचि एवं आर्थिक अर्जन के होड़ ने इसे इस प्रकार धक्का दिया है कि 'ऊँट किस करवट बैठेगा' कुछ पता नहीं चलता। यदा-कदा वाद्ययन्त्र, इससे सम्बन्धित सह वाद्ययन्त्र एवं सहायक सामग्री तथा कलाकार उपलब्ध हो जाते है जो दिखावे मात्र के लिए ही। कहीं-कहीं यह वाद्ययन्त्र दृष्टिगोचर होता है तो वह भी उस स्वरूप में नहीं मिलता जिसमें इसे होना चाहिए। परिमार्जित रूप, ढाचा, विकास की हवा में सनाया हुआ हो गया है। यह वाद्ययन्त्र एक समय था जब यह लोगों की मूलभूत आवश्यकता थी आज यह पराश्रित हो गया है, अधिकतम अर्थोपार्जन की प्रतियोगिता इस वाद्ययन्त्र के दुर्दिन का एक मुख्य कारण है। इसके उपर विलुप्तीकरण का ग्रहण ग्रसित कर रहा है। स्वाभाविक भी है। जिसका अनादर होने लगेगा जो कमी सिरमौर रहा वह दुर्दिन का दंश झेलने लगे तो उसका महरूम होना एक प्रमुख सत्य होगा। आज हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के अपने लोग इसको बर्बाद करने पर आमादा है। अभिभावक एवं रक्षक ही लापरवाह हो रहे हैं तो वर्तमान क्यों नहीं प्रभावित होगा। पूर्वी उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बिहार में तो अभी यह अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए संघर्ष कर रहा है अन्य जगहों पर तो यह त्राहिमाम् की स्थिति में पहुँच गया है। आज के विकसित समाज के लोग इस वाद्ययन्त्र का प्रयोग अपनी प्रभुता के प्रदर्शन के लिए ही करते हैं। इस वाद्ययन्त्र के हितैषी ही अपना सामाजिक स्तर देखकर कोई पिछड़ा न कह दे इसलिए इसके प्रयोग से परहेज कर रहे हैं। आर्थिक उपलब्धि ने मानव को आधुनिकता की दौड़ में ले

आकर खड़ा कर दिया है। इस वाद्ययन्त्र का वर्तमान काल, भूतकाल की अपेक्षा काफी अन्तर वाला विषय हो गया है। एक गीत की ''कहाँ को चले थे, कहाँ जा रहे है'' वाली बात सही प्रमाणित हो रही है। कुल मिलाकर हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का वर्तमान उतना उपजाऊ नहीं लगता जितना कि भूत में था।

## भविष्यत काल

पश्चिमी सभ्यता ने हमारे देश पर चौतरफा हमला करके इस देश की सभ्यता, संस्कृति, नीतिगत ढाँचा, व्यवस्था, जलवायु, सीमाओं को ही प्रभावित नहीं किया है अपितु, भारत की रहन–सहन, खान–पान, पोशाक, बोली, त्योहार, मांगलिक अवसर, लोक साहित्य, लोक कला, लोक वाद्ययन्त्र, लोक नृत्य सबके ऊपर अपना आधिपत्य जमा लिया है एवं जमा रहा है। अपने को आधुनिक एवं सबसे अलग दिखाने की होड़ ने सारी परम्पराओं को गर्त में गिरा दिया है। हमारा भोजन एवं भोजन का तरीका, पोशाक एवं पहनने का ढंग, रहन–सहन एवं रहने का स्वरूप हमारे मनोरंजन एवं मनोरंजन के संसाधन हमारे धर्म एवं धार्मिक आस्था सबको तबाह करके छोड़ दिया है पश्चिमी हवा ने। युवा पीढ़ी तो पश्चिमी हवा की दीवाना हो गयी है, और अभिभावक भी मजबूरी में युवाओं एवं युवतियों को प्रश्रय देकर आग में घी डालने का काम कर रहे हैं। शर्म–हया, बात, विचार सबकुछ परिवर्तित होने लगा है। इतना आमूल–चूल परिवर्तन जहाँ हो रहा है वहाँ वाद्ययन्त्र कैसे अप्रभावित रह सकते हैं। मनोरंजन के प्राचीन एवं गरिमामय संसाधनों को लोग मटियामेट करने पर उतारू हैं। दूसरे अर्थो में यह कहा जा सकता है कि हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का भविष्य बड़ा ही अन्धकारमय प्रतीत हो रहा है। युवावर्ग जिसके कन्धों पर देश एवं समाज की जिम्मेवारी है वे लोक साहित्य, लोककला, लोक वाद्ययन्त्र, लोकनृत्य एवं लोक नाटक से विमुख होते जा रहे हैं। कहीं जमाना पिछड़ा न कह दे, लोग उपहास न करें, हम किसी से पीछे नहीं हैं आदि–आदि विचारों ने इस वाद्ययन्त्र को प्रभावित कर दिया है। इस वाद्ययन्त्र का जब मजाक उड़ा रहे तो अन्य लोग क्यों नहीं उड़ायेंगे?मनोरंजन के आधुनिक साधन जैसे बैंडबाजा, आर्केस्ट्रा, प्रोजेक्टर फिल्में, डी0 जे0 आदि का लोग देखादेखी में अन्धाधुन्ध प्रयोग कर रहे हैं। वर्तमान में इस वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित कोई भी पार्ट्स बाजार में उपलब्ध नहीं है जिससे इनकी मरम्मत किया जा सके या नया छवाई करके वादन का काम सम्पादित किया जा रहा है। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का भविष्य एक और कारण से अन्धकारमय हो रहा है। अब इस समय इस वाद्ययन्त्र के उम्दा कलाकारों की अनुपलब्धता विकट समस्या है। युवा वर्ग एवं नई पीढ़िया इन सारे कार्यों से दूर होती जा रही है। वे कहते है कि कौन इस झंझट में पड़ने जाय। नकद रकम देकर दूसरे संसाधनों से मनोरंजन कर लिया जायेगा। लोककलाओं के कार्यक्रमों के श्रोता भी अब एक दम कम हो गये हैं। नये–नये आधुनिक मनोरंजन के इतने संसाधन आ गये हैं जो घर बैठे आराम से भरपूर आनन्द को दे रहे है। हर जाति वर्ग का अतिशिक्षित होना, ऊँचे पदों पर आसीन होना, समयाभाव होना भी एक प्रमुख कारण है। अब तो यहाँ तक हो

गया है कि लोग अपनी जाति भी नहीं बता रहे है तो जातिगत वाद्ययन्त्रों का कैसे इज्जत करेंगे। विलुप्ती की रफ्तार इतनी प्रबल है कि यही गति कायम रही तो यह वाद्ययन्त्र विलुप्त न हो जाय इसका डर सदा बना रहता है। चूँकि वर्तमान के आधार पर ही भविष्य की उम्मीद की जाती है। अत: वर्तमान ही जब दुर्बल है तो भविष्य का प्रभावित होना स्वाभाविक है। लगता है कि पोशाक में, धोती, कुर्त्ता, पगड़ी, साड़ी, साया, ब्लाउज, भोजन में मोटी रोटी, सत्तू, गुड़, शरबत, पात्रो में कड़ाही, चौकी, बेलने, कटोरा, कठौता, परात, डोका–डोकी, बटुली, गगरा, गगरी, बोली में भोजपुरी, हिन्दी, उर्दू, फारसी, खेलों में कसरत, कुश्ती, कबड्डी, हॉकी, पदकन्दुक, लालटेन, ढ़िबरी, वाद्ययन्त्रों में हुरूका, पखावज, तासा, नक्कारा, सींगा, गाड़ियों में बैलगाड़ी, घोड़ागाड़ी, ऊँट गाड़ी सब के सब विलुप्त हो जायेंगे। ठीक यह दशा हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का भी है। जनमानस को सोचना चाहिए कि इस वाद्ययन्त्र का अन्य वाद्ययन्त्रों से अलग स्थान है। इस वाद्ययन्त्र का भविष्य विकृत हो जायेगा तो अनेकानेक हानियों का सामना करना पड़ेगा। समाज का सांस्कृतिक, पारिवारिक, व्यवहारिक, श्रृंगारिक ढाँचा हिलने लगेगा। मुझे इस बात का डर अनवरत सताता है यह वाद्ययन्त्र विलुप्त होकर इतिहास के पन्नों में न चिपक जाय या किसी संग्रहालय की शोभा बढ़ाने तक ही सीमित न रह जाय।

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र

## भविष्य का अन्धकारमय होने का कारण

इस वाद्ययन्त्र के उपेक्षित एवं लोकप्रियता में कमी के वैसे तो अनेक कारण है। परन्तु मुख्य कारण निम्न हैं।

### (अ) युवा वर्ग की अरूचि

व्यक्तिगत स्वार्थ, शौकीनी एवं अवारापन का स्वभाव होने के कारण अधिकतर युवा अपने लोक साहित्यों के तरफ एकदम नहीं देख रहे हैं। पूरे दिन–रात अनावश्यक चक्रमण करते रहना आज के युवाओं की फितरत बन गयी है। वे निरंकुश एवं तानशाह प्रवृत्ति के होते जा रहे हैं। नशे का लत होने के कारण नशा को ही प्राथमिकता देते हैं। व्यर्थभ्रमण एवं व्यर्थ बातें मुख्य रहती है एवं अनुशासन , कलाप्रेम, सहजता, सरलता गौण। हालांकि कुछ युवा दूसरे के सात्विक विचार के हैं परन्तु संक्रामक रोग किसे छोड़ता है।

### (ब) बुजुर्गो के मार्गदर्शन को न मानना

हालांकि इस आधुनिक युग में बुजुर्गो का अधिकतर अनादर ही होता है। उनकी बातें जो अमूल्य एवं समाज सुधारक, मार्गदर्शक होती है, उन्हे व्यर्थ बकवास की संज्ञा देकर चुप करा दिया जाता है। फिर भी बुजुर्गो को चाहिए कि वे

नम्रतापूर्वक सहज, सरल एवं विनोदपूर्ण वातावरण स्थापित करके हँसी–हँसी में अपने परिवार के युवाओं के मनसा को भाँपकर लोक साहित्यों को विलुप्त होने से बचाने के लिए युवाओं को इतिहास बता–बता कर आवश्यक सुझाव एवं मार्गदर्शन देते रहना चाहिए। यदि 10–20 प्रतिशत भी सुझाव का सकारात्मक प्रयोग हुआ तो बहुत ही अच्छा परिणाम कहा जायेगा। घर के एवं समाज के बुजुर्ग जिनके पास इस समाज का एक लम्बा अनुभव रहता है, वे वास्तव में युवा वर्ग के लिए किसी योग्य गुरू से कदापि कम नहीं होते हैं।

# आधुनिकता की लहर

आधुनिक बनने की होड़ ने इस वाद्ययन्त्र का भविष्य अन्धकारमय कर दिया है। रातों–रात अलग दृष्टिगोचर होने की मंशा ने हुडुका (हुरूका) सहित समस्त लोक कलाओं पर विलुप्ती का बोझ लाद दिया है।

# हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को विलुप्त होने से बचाने के कुछ उपाय

जिस वाद्ययन्त्र का इतना परिपक्व इतिहास है, आस्था एवं विश्वास केन्द्र बिन्दु है जिसने समाज निर्माण में ताना–बाना का काम किया है, जिसने मनोरंजन की दुनिया को एक नई आवृत्ति दी है, जिसने समतामूलक समाज के स्थापना में अहं भूमिका अदा की है, जिसने समाज को एकता के सूत्र में बाँधने का परिश्रम किया है, जिसने निर्धनों एवं असहायों को सम्बल प्रदान किया है, वह वाद्ययन्त्र भविष्य में विलुप्त हो जाय इससे शर्म की बात क्या हो सकती है?हर हालत में इस वाद्ययन्त्र को सुरक्षित रखना हम सभी को अपना पुनीत कर्तव्य समझना चाहिए। कुछ आवश्यक सूत्र हैं जो इस वाद्ययन्त्र को विलुप्त होने से बचा सकते है। जो निम्न हैं।

## (अ) युवाओं को आगे आना चाहिए

युवा चाहें तो हवा का रूख बदल सकते है। युवा वह शक्ति है कि नकारात्मक विन्दु को सकारात्मक कर सकते हैं। अत: इस लोक वाद्ययन्त्र को कायम रखने के लिए युवा वर्ग को सदा बिना बुलाये आगे आना चाहिए। संस्कृति रहेगी तभी अपनी पहचान बनेगी। जो व्यक्ति संस्कृति विहीन होता है, वह पशुवत हो जाता है। युवा वर्ग को आगे आकर समूह एवं संगठन बनाकर जनजागरण करना चाहिए। लोगों के अन्दर ऐसी चेतना का विकास करे कि, स्वयं लोग इस वाद्ययन्त्र के प्रति समर्पित हो जाँय। हो सके तो समय लेकर जन–जन तक विभिन्न प्रचार माध्यमों के सहारे प्रचार एवं प्रसार करना चाहिए।

## (ब) बुजुर्गों की जिम्मेवारी

एक महात्मा गाँधी ने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व से गुलाम भारत की तकदीर बदल दी। युवाओं में जोश एवं उमंग का जहाँ होना अनिवार्य है, वहीं दिल–दिमाग का अन्यत्र आना–जाना भी स्वाभाविक है। इस स्थिति में प्रत्येक बुजुर्ग की यह जिम्मेवारी बनती है कि वे युवाओं को अनवरत प्रेरित करें। लोकवाद्ययन्त्र हुरूका का गुण, दोष, लाभ, हानि, मनोरंजन की विस्तृत चर्चा करके युवाओं को उत्साहित करना बुजुर्गों का अपना कर्तव्य समझना चाहिए। स्वयं अनुशासित होकर एक शिक्षक की भाँति युवाओं को शिक्षित करें। लोकसाहित्य, लोकराग, लोकगान, लोकवाद्ययन्त्र, लोकनृत्य, लोकनाटक क्या है, इनका सामाजिक क्षेत्र एवं प्रभाव कैसा है, इस पर प्रकाश डालते रहना चाहिए। युवा वर्ग यदि रास्ता पकड़ लिया तो कठिन से कठिन एवं असम्भव से असम्भव कार्य भी सम्भव हो सकता है। अतः बुजुर्गों की भी जिम्मेवारी कम नहीं है। युवा वर्ग को काम करना है एवं बुजुर्गों को कराना चाहिए। पहली पादान पर चढ़कर पीछे से युवा वर्ग को चढ़ने का मार्ग प्रशस्त करना चाहिए।

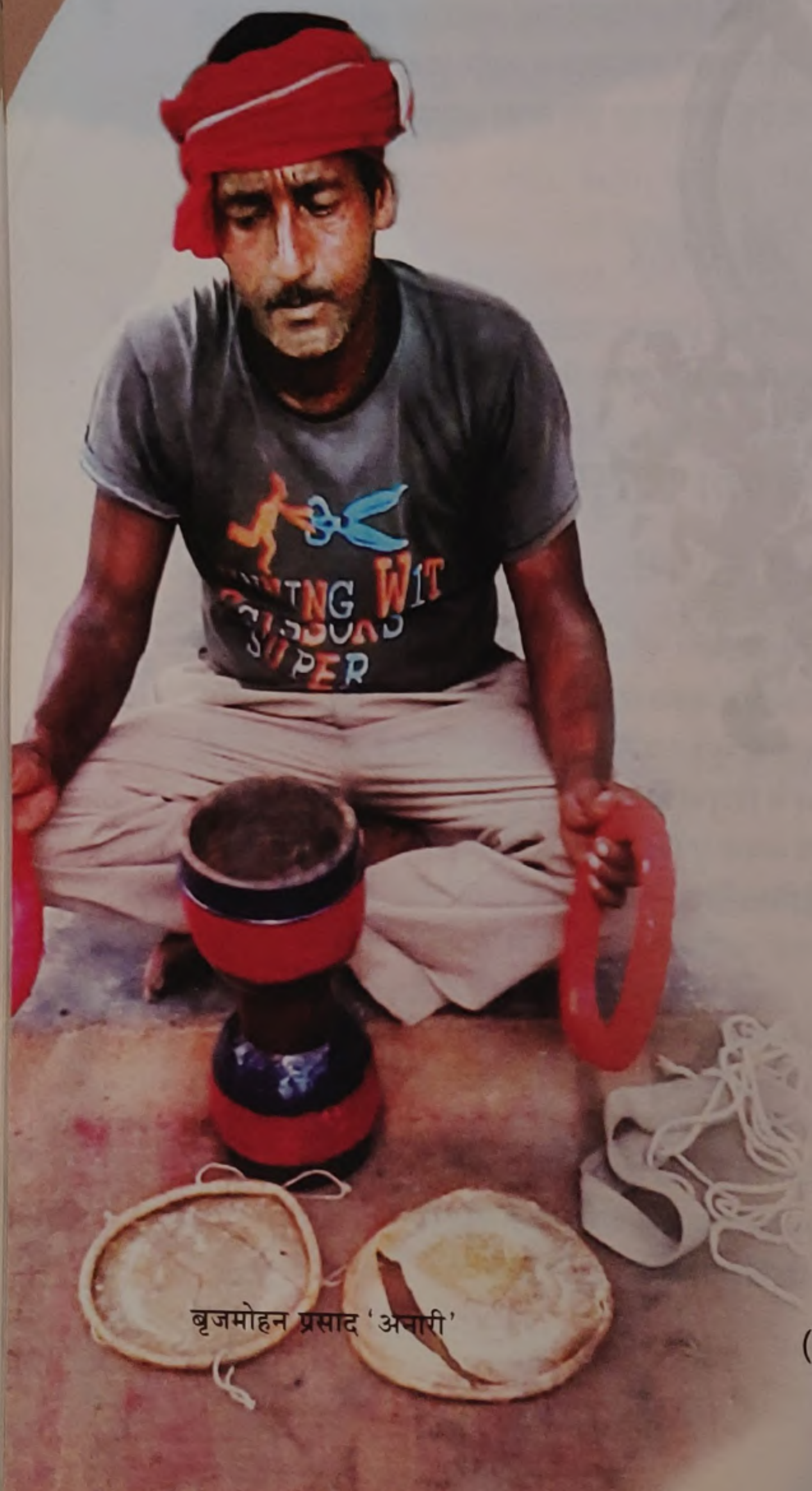

# विभिन्न अवसरों पर इस वाद्ययन्त्र का नि:संकोच प्रयोग

जैसे की अतीत में समस्त कार्यक्रम इसी वाद्ययन्त्र के सहारे सम्पन्न होते थे उसी प्रकार अब भी प्रयोग करने की आदत डालनी चाहिए। संकोच एवं शर्म का परित्याग कर, दो मुँही दुनिया की बातों को दर किनार कर, अपनी आर्थिक क्षमता का अध्ययन कर, पूर्वजों के सम्मान का ध्यान रखकर, सुगमता एवं सरलता हेतु इस वाद्ययन्त्र, सहवाद्ययन्त्र एवं गीतों के माध्यम से अपने मांगलिक समस्त कार्यक्रमों को सम्पादित करने की आदत डालनी चाहिए। कौन क्या कहता है?यह विनाशकारी सूत्र है। शिक्षित एवं विकसित होने का यह मतलब नहीं है कि हम अपनी सभ्यता, रहन–सहन, साहित्य, संस्कृति एवं परम्पराओं को भूल जाय। यदि विभिन्न अवसरों पर अपने वैभव के प्रदर्शन हेतु आधुनिक मनोरंजन के साधनों का प्रयोग करना मजबूरी हो तो हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को भी उचित सम्मान के साथ अपने कार्यक्रमों में निश्चित तौर पर प्रयोग करना चाहिए।

# विभिन्न सम्पन्न संस्था एवं सरकारी सहयोग

हुडुका (हुरूका) जैसे लोकवाद्ययन्त्रों की स्थिति पतली करने में विभिन्न सरकारें एवं संस्थाओं का दोष कम नहीं है। भारत सरकार एवं भारत के राज्यों की सरकारी मशीनरी ने भी इस वाद्ययन्त्र को उपेक्षित करने में कोई कसर उठा नहीं रखी है। विभिन्न सरकारों चाहें वे केन्द्र की हो या राज्यों की, लोकवाद्ययन्त्रों को सक्रिय रखने के लिए उन्हे सदा सतर्क एवं प्रयत्नशील रहना चाहिए। प्रत्येक राज्य सरकारों के संस्कृति विभाग में एक लोकवाद्ययन्त्र सम्बन्धी अनुभाग (शाखा) रखना चाहिए। लोक कलाओं के लिए अलग से बजट की व्यवस्था रखना चाहिए। सरकारी खर्च पर इस वाद्ययन्त्र एवं इससे सम्बन्धित गीत, नाटक, नृत्य को पूरे देश में विभिन्न अवसरों पर प्रदर्शित होना चाहिए। इससे कलाकारों का मनोबल ऊँचा होगा। संग्रहालय बनाकर वाद्ययन्त्रों को सुरक्षित रखना एवं उनकी देखभाल करना चाहिए। कलाकारों की नियुक्ति सरकारी कर्मचारी की तरह करना चाहिए। कलाकारों के परिवार के भरण–पोषण की तरफ ध्यान देना चाहिए। वेतन भोगी बना देने से कलाकार समर्पित होकर कार्य करेंगे। वेतन सम्भव न हो तो उनके मानदेय का व्यवस्था करना चाहिए। ऐसे लोककलाकार जो लोकवाद्यों पर कला दिखाते–दिखाते शारीरिक एवं मानसिक रूप से अक्षम हो गये हो उन्हें पेंशन की व्यवस्था करनी चाहिए। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र वाले राज्यों में हिन्दी अथवा संगीत विषय में एक–पाठ लोककला से सम्बन्धित अवश्य रखना चाहिए। वह पाठ अनिवार्य होना चाहए। सम्भव हो तो भारतीय लोककला एवं लोकवाद्ययन्त्र नामक एक विषय ही बना देना चाहिए। विद्यालयों के सांस्कृतिक कार्यक्रमों में हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र का प्रदर्शन अनिवार्य कर देना चाहिए। लोककला वाले क्षेत्रों में लोक संग्रहालय बनाकर वहाँ वाद्ययन्त्रों को रखना चाहिए ताकि सुगमता से वाद्ययन्त्र मिल जाय। कलाकारों को प्रोत्साहन देकर प्रोत्साहित करते रहना चाहिए। लोकगीत के रचनाकारों को भी इनके साथ जोड़कर रखना चाहिए।

# सामाजिक जिम्मेवारी

इस प्रदूषित समाज के लोगों की भी यह जिम्मेवारी बनती है कि वे हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र को सुरक्षित एवं संरक्षित करते हुए सम्मान दें। इस लोक वाद्ययन्त्र से सम्बन्धित नृत्य, गीत, नाटकों को सपरिवार देखें। पास–पड़ोस को भी जोड़ने का प्रयास करें। हुडुका (हुरूका) वाद्ययन्त्र के कलाकारों को हेय दृष्टि से नहीं अपितु सम्मानजनक नजरों से देखें। उन्हें प्रोत्साहित करते रहे। विनम्रतापूर्वक लोग विशेषकर गोंड़ जाति के लोगों से कहें कि आपके कार्यक्रम में यह वाद्ययन्त्र निश्चित तौर पर वादन होना चाहिए। वैसे अपने मांगलिक अवसरों पर सबको इस वाद्ययन्त्र का वादन एवं इससे सम्बन्धित कलाओं का प्रदर्शन कराना चाहिए।

# उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र इलाहाबाद बधाई का पात्र क्यों?

आज पूरा देश आधुनिकता की हवा में बह रहा है। सभी प्राचीन परम्परायें आक्सीजन पर चल रही हैं। पुरानी सभ्यताओं का प्रयोग लोग पिछड़ेपन होने का प्रतीक मान रहे हैं। इसी विरोधाभास के युग में उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र इलाहाबाद (संस्कृति मन्त्रालय भारत सरकार) जिसे मध्योत्तरी कहते है, वह लोक साहित्य, लोकगीत, लोकराग, लोकवाद्य, लोकनृत्य, लोकनाट्य के सम्बर्द्धन एवं संरक्षण हेतु रात-दिन एक किये हुए है यह एक अनोखा कदम है। इस संक्रमित एवं प्रदूषित समाज में जहाँ लोग आधुनिकता के पीछे बेतहासा दौड़ रहे है, वहीं यह केन्द्र उपरोक्त कलाओं के विकास एवं प्रसार हेतु संलग्न है यह काबिले तारीफ है। पुराने वाद्ययन्त्र जैसे- हुडुका (हुरूका), पखावज, सींगा, ताशा, नक्काड़ा, झाल, डफरा आदि-आदि जो अपने बुरे दिन पर आँसू बहा रहें है, उन्हे नई ऊर्जा देना सबके वश की बात नही है। कजरी, कहरवा, दादरा, खेमटा, लाचारी, सोहर, खेलवाना, पूर्वी, गोड़ऊ, आदि-आदि लोकरागों एवं लोकगीतों को स्मिता बचाना भी अपने में एक अद्भुत एवं पुनीत कार्य है। इस महानतम कार्य के लिए मै उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र इलाहाबाद के विद्वान, यशस्वी एवं कलाप्रेमी निदेशक महोदय, प्रलेखन-सह-प्रकाशन अधिकारी महोदय, केन्द्र के समस्त विद्वान अधिकारी वर्ग, कर्मचारी वर्ग को अपने तरफ से कोटि-कोटि साधुबाद देते हुए सादर प्रणाम करता हूँ। केन्द्र के कार्य क्षेत्र की बात हो या अनायास यह विषय जेहन में आ गया इसके लिए भी मैं सांष्टांग प्रणाम करता हूँ।

व्यक्तिगत परिचय

# बृजमोहन प्रसाद 'अनारी'

| | | |
|---|---|---|
| नाम | – | बृजमोहन प्रसाद 'अनारी' |
| पिता का नाम | – | स्व0 केदारनाथ प्रसाद |
| माता का नाम | – | श्रीमती जगेश्वरी देवी |
| जन्मतिथि | – | 01–07–1959 |
| योग्यता | – | बी0ए0, बी0टी0सी0 |
| स्थायी पता | – | ग्राम–कुम्हियां, पोस्ट–भरखरा, जिला–बलिया (उ0प्र0) पिन नं0–277304 |
| पत्र व्यवहार पता | – | ग्राम–कुम्हियां, पोस्ट–भरखरा<br>जिला–बलिया (उ0प्र0)<br>पिन नं0–277304 |
| पेशा | – | अध्यापन, साहित्य सेवा, कृषि एवं समाजसेवा |
| प्रकाशित कृतियाँ | – | (1) जिनगी के थाती गीत संग्रह<br>(2) आसरा के दिया गीत संग्रह<br>(3) सितुही में मोती गीत संग्रह<br>(4) अँखियन के लोर गीत संग्रह |
| सम्मान | – | उ0प्र0 हिन्दी संस्थान लखनऊ से 'भिखारी ठाकुर सर्जना तथा 'राहुल सांकृत्यायन' पुरस्कार। |
| अन्य सम्मान | – | देश–विदेश के अनेक संस्थाओं एवं व्यक्तियों द्वारा सम्मानित। |
| चलभाष | – | 09450953545 |

मध्योत्तरी


## उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद

14, सी.एस.पी. सिंह मार्ग, इलाहाबाद-211001

दूरभाष : 0532-2423775

ई-मेल : nczcc@rediffmail.com वेबसाइट : www.nczccindia.in


बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ

स्वच्छ भारत स्वस्थ भारत